बीकानेर में उर्दू के

अलमबरदार

ये किताब मतबूआ कुतब और मज़ामीन के अलावा शायरों, अदीबों और उर्दू दोस्त हज़रात से हासिल शुदा इत्तलाअत की मदद से दो साल की लगातार मेहनत के बाद तैयार हुई।

मुरत्तिब
हाजी खुर्शीद अहमद

पेशकश
हल्क़ा-ए-अदब
बीकानेर

Bikaner Mein Urdu ke Alambardar

नाम किताब – बीकानेर मे उर्दू के अलमबरदार
जबान – उर्दू
रस्म–उल–खत – देवनागरी
सफहात – 80
कीमत – रु 100/–
इशाअत – 2001 ई.

मुरत्तिब – हाजी खुर्शीद अहमद
पेशकश – हल्का–ए–अदब, बीकानेर

कम्प्यूटर कम्पोजिग
हुसैन शहीद
थार होटल के पीछे
743/ए, होस्पीटल रोड, बीकानेर। 334003
फोन 520621

मिलने का पता
जिया स्टोर्स, कोटगेट, बीकानेर
मिस्कीन बुक डीपो, मोती डूँगरी रोड, जयपुर
नसीर बुक डीपो, रामगज बाजार, जयपुर

प्रेस लोमस ऑफसेट प्रेस, दिल्ली

तशक्कुर भूल जाए हजरत–ए–आजाद का रासिख
चलन अपना खिलाफे मसलके अहले वफा क्यू हो

हम इस इशाअत को निहायत एहतराम के साथ

बीकानेर में
उर्दू के मीर–ए–कारवाँ

शेख़ मोहम्मद इब्राहीम 'आज़ाद'

मरहूम के नाम से

इन्तसाब

करने की सआदत हासिल कर रहे हैं।

फहरिस्त

हल्क़ा-ए-अदब,

बीकानेर

(कायम शुदा – 1998)

1.जनाब मोहम्मद इब्राहीम ग़ाज़ी	सरपरस्त
2.हाजी ख़ुर्शीद अहमद	सद्र
3.हाफ़िज़ डॉ. मोहम्मद हुसैन	सेक्रेट्री
4.पं. जशकरण गोस्वामी	सदस्य
5.जनाब अशफ़ाक क़ादरी	सदस्य
6.इंजीनियर हुसैन शहीद	नाज़िम

पेश लफ्ज़

और कारवां बनता गया

. . ..भवानी शकर व्यास 'विनोद'

"वीकानेर मे उर्दू के अलमवरदार" को मैं एक महत्वपूर्ण कृति मानकर चलता हू। इसके पीछे कुछ आधारभूत कारण है। पहला यह कि इसमे कालखण्ड को निश्चित कर दिया गया हे। केवल उन्ही मनीपियो ओर साहित्यकारो को सम्मिलित किया गया है जिन्होने 1897 से 1947 तक के पचास वर्षो में उर्दू भापा ओर साहित्य की समृद्धि के लिए महत्वपूर्ण योगदान दिया था। कालखण्ड का यह विभाजन एक साथ कई भ्रातियो को दूर कर देता है। यूं नामो को सम्मिलित करने अथवा छोडने के पीछे कोई सदेह नही रह जाता। दूसरा यह कि इस पुस्तक को प्रामाणिक वनाने पर जितना ध्यान दिया गया, उतना शायद ही किसी अन्य पुस्तक पर दिया गया हो। पुस्तक के सारे आलेख धारावाहिक रूप से दैनिक 'युगपक्ष' वीकानेर मे प्रकाशित किये गये तथा प्रत्येक अंक की पचासो प्रतियां विद्वानो, साहित्यकारो, समीक्षको, शोधवेत्ताओ और अन्य जानकारो को देश भर मे भेजी गई ताकि कमियो या त्रुटियो के वारे मे सुझाव प्राप्त हो सके। इस प्रकार पुस्तक के प्रकाशन के पीछे दो वर्षो की अखण्ड तपस्या है। अव विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि इसमे जो भी तथ्य दिये गये है, वे अकाट्य हैं। सोने की तरह ही नही, कुन्दन की तरह चमकदार और वहुमूल्य।

तीसरा कारण यह है कि पुस्तक मे उर्दू के दिवगत अथवा जीवित साहित्याकारो की वरिष्ठता ओर योगदान के आधार पर एक सिलसिलेवार प्रस्तुति है। जानकारी को एक साथ समेटने का प्रयास किया गया हे। 1897 से लेकर 1947 के दोर मे अन्य भापाओ – हिन्दी, राजस्थानी व संस्कृत के भी अनेक महत्वपूर्ण साहित्यकार हुए पर इनमे से किसी भी भापा मे ऐसा सिलसिलेवार दस्तावेज वनाने का कभी कोई प्रयास नही किया गया। पृथक–पृथक साहित्यकारो पर तो खूब लिखा गया है पर एक निश्चित कालखण्ड के सभी महत्वपूर्ण पुरोधाओ को क्रमश एक साथ प्रस्तुत करने

और प्रामाणिकता बनाये रखने का कोई जतन कभी नही हुआ। इस दृष्टि से भी देखा जाए तो हाजी खुर्शीद अहमद का यह प्रयास ऐतिहासिक माना जा सकता है।

चौथी बात इसकी कसावट को लेकर है। प्रत्येक आलेख मे व्यक्तित्व और क तित्व को लेकर कुछ निश्चित मानदण्ड रखे गये हैं। इनमें जीवनी के कुछ अश, कुछ महत्वपूर्ण घटनाए, कथ्य एवम् शैली के आधार पर रचनाओ की साहित्यिक विशेषताए तथा गजलो या नज्मो के कुछ उदाहरण अवश्य ही दिये गये है। इनमे सक्षिप्तता भी हे और कसावट भी। छोटे–छोटे अध्याय, सार्थक विषय–वस्तु, समकालीन प्रासिगकता, अन्तरंग अनुभव और सयानी समझ के साथ जो कुछ भी लिखा गया है, पाठक उसमें तत्काल ही आत्मसात हुए बिना नही रह सकता। साहित्यकार जीवन्त होकर जैसे सामने उपस्थित होजाता है। कही कोई लफ्फाजी नही, कही कोई अनावश्यक विस्तार नही, कही कोई पुर्वाग्रह नही। जो कुछ है सीधा है, सच्चा है, सौ टका टच है।

पॉचवी बात भाषा के प्रवाह को लेकर है। लेखक को उर्दू भाषा पर पूरा अधिकार है पर पाडित्य प्रदर्शन कही पर भी नही है। जहां सीधी व सहज भाषा हो, सम्प्रेषण मे दुविधा नही होती। पुस्तक मे न शैलीगत व्यामोह है और न कोई जटिलता। कही–कही तो वृतान्त इतने मार्मिक हैं कि 'ऑखो देखी घटना' जैसा स्वरूप सामने आजाता है। इस दृष्टि से मोहम्मद उस्मान आरिफ की मृत्यु और शवयात्रा के दृश्य गिनाये जा सकते है। कही रेखाचित्र जैसा आस्वाद आता है तो कही बातपोशी का ठसका। मोहम्मद यूसुफ अजीज पर लिखे आलेख को उर्दू का बेहतरीन रेखाचित्र माना जा सकता हे जबकि गुलाम सरवर 'वफा' के आलेख मे कदम–कदम पर शे'र कहने और अपने मिजाज से लोगो को तत्काल प्रभावित कर देने वाले दृष्टान्त बातपोशी की एक अच्छी मिसाल प्रस्तुत करते हैं।

छठा और अतिम कारण लेखक की साफगोई (स्पष्टवादिता) से सम्बन्धित है। किसी भी साहित्यकार के बारे मे प्रयत्न करने पर भी जहा–कहीं भी पूरी सामग्री नही मिली, लेखक ने उसे साफगोई के साथ स्वीकार किया है। यह भी लिखा है कि प्रयत्न जारी हे। जब–कभी भी सामग्री मिलेगी, उसका प्रकाशन अवश्य किया जाएगा। इस दृष्टि से शेख निसार अहमद 'निसार', शेख मोहम्मद अब्दुल्ला सूफी तथा सोहनलाल

भटनागर की गणना की जा सकती है। लेखक ने अन्य शायरो के बारे मे भी जानकारी लेने के जो प्रयास किये, वे भी प्रशसनीय हैं। जहा से भी सामग्री मिली, उसे सम्मिलित करते गये रिसाले हो या दीवान, शोधग्रथ हो या समीक्षाए, बातचीत के आधार पर जानकारिया हो या पत्र–व्यवहार सम्बन्धी दस्तावेज, लोगों के सस्मरण हो या समाचार पत्रो की कतरने, लेखक ने इन सबको समेटा इनकी सच्चाई की जॉच की और तब अपनी पुस्तक मे स्थान दिया।

पुस्तक मे अलमबरदारो की जो चरित्रगत विशेषताए और जीवन की महत्वपूर्ण घटनाए उभरती हे, वे भी इसे एक पठनीय और सग्रहणीय कृति बनाने वाली हैं। प्रतिनिधि साहित्यकारो मे लेखक ने तीन श्रेणियो के शायरो को समविष्ट किया है। एक तो वे जो बाहर से बीकानेर आए, कुछ समय तक बीकानेर मे रहे, उर्दू भाषा और साहित्य को सम्पन्न किया, वातावरण बनाया और फिर अपने प्रात मे वापस चले गये। दूसरे वे जो बीकानेर में बाहर से आए पर फिर सदा के लिए यही के होकर रह गये। तीसरे वे जिनके पूर्वज भी, वे भी तथा उनके वशज भी बीकानेर के मूल निवासी होने का गौरव रखते है। श्रेणियॉ भले ही तीन हो पर उनके कारण किसी के साथ भी पक्षपात नही किया गया है।

लेखक ने बीकानेर के गौरव को स्थापित और प्रमाणित करने का हर सभव प्रयास किया है। इनमे से कुछ शायर ऐसे भी थे जिनका लोहा देश के प्रतिष्ठित साहित्यकार भी मानते थे। बादशाह हुसैन राना के एक शे'र को लाहौर के मुशायरे मे सुनकर अल्लामा इकबाल का यह कहना कि "इस रदीफ और काफिये पर इससे बेहतर शे'र अब मुमकिन नही", बीकानेर की महिमा को मडित करने वाली बात है। दिल्ली के एक मुशायरे मे जहा डॉ जाकिर हुसैन जेसे दिग्गज विद्वान उपस्थित हो, उसकी सदारत करने का श्रेय बीकानेर के जरस–ए–कारवां मोहम्मद अब्दुल्ला 'बेदिल' को प्राप्त हुआ। वे एक ऐसे सिद्धहस्त शायर थे जिनके बारे मे स्वय उनके उस्ताद हजरत बेखुद देहलवी को कहना पडा था, "दीवान को देखकर बेखुद को अब यह साबित हुआ कि बेदिल ने इस दूर उफतादा की जबान पर डाका डाला है। दुनिया के मालोमता से और तो कुछ मेरे पास न था, एक जबान रखता था वो हजरत बेदिल की नज्र हुई"। आजादी से पहले बीकानेर को महिमा–मण्डित करने वालो मे बादशाह हुसैन राना, मोहम्मद अब्दुल्ला

'बेदिल', हाजी मोहम्मद यूसुफ 'रासिख' और हुसैनुद्दीन फौक 'जामी' के नाम उल्लेखनीय है। इन्होने जिन प्रतिि ठत और देश भर में विख्यात शायरो के साथ मुशायरो मे शिरकत की या उनसे व्यक्तिगत सम्पर्क रखे उनमे डॉ इकबाल, वेखुद देहलवी, जिगर मुरादाबादी, आनन्द नारायण मुल्ला, डॉ. जाकिर हुसैन, सर तेजबहादुर सप्रू, रामप्रसाद विस्मिल, हरिवशराय 'वच्चन', साइल देहलवी, ख्वाजा मोहम्मद शफी, जरीफ लखनवी, शीशचन्द तालिव देहलवी और पडित व्रज मोहन दत्तात्रेय 'कैफी' आदि लोग सम्मिलित है। आजादी के वाद इस ज्योति को आगे वढाने वालो और देश भर के मुशायरो मे धूम मचाने वालो मे मोहम्मद उस्मान आरिफ, मोहम्मद यूसुफ अजीज, कामेश्वर दयाल हर्जी, दीन मोहम्मद मस्तान तथा मोहम्मद इब्राहीम गाजी का योगदान उल्लेखनीय है।

पुस्तक मे कुछ घटनाए जीवन्त होकर सामने आ खडी होती है। इनमे वादशाह हुसैन राना की रामायण नज्म के देश भर मे प्रथम आने पर सर तेजवहादुर सप्रू द्वारा वीकानेर मे आकर स्वर्ण पदक देना, बेदिल द्वारा अखिल भारतीय मुशायरे की दिल्ली मे सदारत करना, मोहम्मद यूसुफ रासिख द्वारा अपने दीवान की एक प्रति अल्लामा इकबाल को भेट करना, फौक जामी द्वारा उर्दू के प्रचार–प्रसार के लिए मदरसो की स्थापना करना, मोहम्मद उस्मान आरिफ द्वारा संसद–सदस्यो की उर्दू कमिटी का नायव सदर होना, वीकानेर मे मशवरा–ए–सुखन की तहरीक चलाना व राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर के कार्यों में भाग लेना, यूसुफ अजीज को एक गजल पर स्वर्णपदक मिलना व उनके द्वारा वीकानेर में अजुमन–ए–तरक्की–ए–उर्दू की शाखा स्थापित करना, गुलाम सरवर वफा द्वारा हर घटना को शे'रमय वना देना, दीन मोहम्मद मस्तान के लिए स्वय उनके उस्ताद मोहम्मद यूसुफ 'सागर' द्वारा प्रशसामूलक सनद देना व पढे–लिखे न होने पर भी देश भर मे अपनी छाप छोडना और मोहम्मद इब्राहीम गाजी द्वारा नेहरुजी की टिप्पणी पर वेवाक विचार प्रकट करना आदि दृष्टान्त सामने आये विना नही रहते।

यह वीकानेर ही है जिसमे पिता–पुत्र की पीढी को एक ही उस्ताद के शागिर्द होने का श्रेय मिला, यह वीकानेर ही हे जिसमे वादशाह हुसैन राना के शागिर्दो ने उर्दू अदव और उर्दू भाषा को परवान चढाया और यह वीकानेर ही है जहाँ उर्दू के अलमवरदार मोहम्मद अब्दुल्ला वेदिल का

स्वागत भारतीय स्तर के सस्कृत के विद्वान पडित विद्याधर शास्त्री ने हिन्दी विश्वभारती (नागरी भण्डार) म किया और यह बीकानेर ही है जहा के शायरो बादशाह हुसैन राना, हाजी यूसुफ 'रासिख', दीन मोहम्मद मस्तान और इब्राहीम गाजी जैसो ने सीता, प्रह्लाद, पन्ना धाय, गुरु गोविन्दसिंह और महावीर स्वामी पर नज्मे लिखकर विलक्षण साम्प्रदायिक सद्भाव का परिचय दिया।

लेखक ने इस छोटी सी पुस्तक मे अनेक उल्लेखनीय बिन्दुओ का समावेश किया है – अलमबरदारो के आपसी सम्बन्धो और सम्मान का बाबा–ए–उर्दू मौलवी अब्दुल हक के राष्ट्रव्यापी सर्वेक्षण का, भाषा को परवान चढाने वाले लोगो के प्रयासो का, पत्र–पत्रिकाओं मे छपी समीक्षाओ का, महत्वपूर्ण दीवानो और साहित्यिक कृतियों का, संस्थाओं की स्थापनाओ का, कवि सम्मेलनो व मुशायरो का, शायरो की मस्ती का, फाकामस्ती का और न जाने कितनी–कितनी बातो का उल्लेख किया है।

पुस्तक की सबसे बडी उपलब्धि यह है कि एक बार हाथ मे आने के बाद उसे पूरा पढे बिना छोडने का जी नही चाहता। किसी भी पुस्तक की इससे बडी विशेषता और क्या हो सकती हे।

मुझे विश्वास हे कि एक तो यह पुस्तक इस दिशा मे मील का पत्थर साबित होगी, दूसरे यह ऐसी ही अन्य अनेक पुस्तको के प्रकाशन की प्रेरणा भी देगी।

पुस्तक के प्रकाशन के समय इसका पहला पाठक होने का जो श्रेय मुझे दिया गया हे, उसके लिए मैं उर्दू के समर्थ शब्द–शिल्पी और साहित्य–पारखी हाजी खुर्शीद अहमद को साधुवाद देना अपना कर्तव्य मानता हू। इत्यलम्।

भवानी शकर व्यास 'विनोद'

1–स–9 पवनपुरी
बीकानेर

अर्ज़-ए-मुरत्तिब

बीकानेर मे उर्दू अदब की तारीख एक सो बरस से ज्यादा पुरानी है लेकिन इस तारीख को महफूज करने का अबतक कोई पुख्ता इन्तजाम नही हो सका है। पिछले 30–35 बरसो मे इस विषय मे कुछ लिखा जरूर गया लेकिन वो आम न होसका। 1989 मे डॉ मोहम्मद हुसैन ने एम ए (उर्दू) परीक्षा के लिये बीकानेर के मशहूर शायर 'बेदिल' बीकानेरी को अपना मौजू बनाया तो अपने मिकाले के प्रस्तावना स्वरूप बीकानेर मे उर्दू की एतिहासिक चर्चा भी की। लेकिन पिछले 4–5 बरस मे जो चन्द लेख इस बाबत अखबारो और किताबो मे शाया हुए उन्होने इन तारीखी हालात की अनदेखी करने की कोशिश की है। लेखको ने ये कहने की कोशिश की है जैसे बीकानेर मे उर्दू उनकी ही देन है। इन लेखो को पढते हुए ये शेर जहन मे उभरता है.

अपनी मिदहत, खुदपरस्ती, खुदनुमाई, खुदसरी
कैसे खुशफहमी के सहराओ मे शायर खो गये
(नामालूम)

1857 के बाद उर्दू ने बीकानेर मे अपने पाव जमाना शुरु कर दिया था। 1912 ई. तक तो उर्दू को बीकानेर रियासत मे सरकारी जबान का दर्जा हासिल था। उर्दू मे कई किताबे लिखी जा चुकी थी। आज हमें उन लोगो का ध्यान आता है जिन्होंने बीकानेर मे उर्दू की सही मायने मे खिदमत की है।

1997–98 मे मैने कुछ दस्तावेज जमा किये। उनसे इस्तफादा करते हुए 'बीकानेर मे उर्दू जबान–ओ–अदब की निस्फ सदी (1897–1947)' उनवान से एक मिकाला तैयार किया। उस मे काफी वक्त लगा। वजह यह हुई कि ज्यू ज्यू ये मिकाला तैयार होता गया, बीकानेर के नुमाइंदा और बाखबर हजरात को बताया जाता रहा। उनकी राय के मुताबिक उसे ज्यादा से ज्यादा वाकयाती और गेर जानिबदार बनाने की कोशिश की। फिर एक शाम सलाम के मुशायरे मे शिरकत के लिये जमा हुए शायरो, अदीबो और उर्दूदा हजरात के सामने उसे पढ दिया। मिकाला पसन्द किया गया। किसी किस्म का एतराज सामने नही आया। इस मजलिस से हौसला मैने मिकाले को प्रेस के लिये जारी कर दिया। माहनामा

फरवरी 1999 के शुमारे मे और हिन्दी के दैनिक 'युगपक्ष' बीकानेर ने 19 मई 1999 के अंक मे उसे प्रकाशित कर दिया। यूं यह मिकाला पूरे राजस्थान मे एहल–ए–उर्दू की जानकारी मे आगया। इस किताब मे भी यह शामिल है।

मिकाले मे शामिल और उस जमाने से मुतल्लिक कुछ हजरात के हालात और नमूना–ए–कलाम पर मजामीन भी लिखे जिन्हे युगपक्ष के शुमारो मे शाया करा दिया। पहला मजमून शेख मोहम्मद इब्राहीम 'आजाद' पर तारीख 19 मई 1999 को छपा उसके बाद कम–ओ–बेश दो साल मे करीब 19 मजामीन शाया हुए। इन मजामीन को बीकानेर और राजस्थान बल्कि बेरुन–ए–राजस्थान भी ज्यादा से ज्यादा हाथो मे पहुचाया गया। गरज इस से यह थी कि अगर किसी किस्म की मुनासिब तरमीम का सुझाव आए तो तो उसे शामिल कर लिया जाए। यह बात मेरे लिये बाअस–ए–तसल्ली है कि कोई एतराज तो आया ही नही बल्कि इज़हार–ए–पसन्दीदगी के खुतूत मिलते रहे। हैदराबाद (ए.पी.) के जनाब शागिल अदीब साहब ने तो इन मजामीन को उर्दू मे लिख कर वहा के अखबारों मे युगपक्ष के हवाले से शाया करा दिया। यूं ये मजामीन किताबी शक्ल मे आने से पहले अवाम की हिमायत हासिल कर चुके हैं।

इस किताब मे कुछ हजरात का जिक्र नही आ' सका है जिनकी खिदमात बीकानेर मे उर्दू के फरोग मे अपना मकाम रखती हैं। उन का जिक्र इन्शाल्लाह मिकाले के दूसरे हिस्से मे आ जायगा जो जेर–ए–तरतीब है।

इस किताब को मुरत्तिब करने मे जो कोशिश हुई और वक्त लगा उससे जाहिर है कि मुतादद हजरात से ताअवुन मिला है। उन तमाम हजरात का शुक्रिया अदा करना हम अपना फर्ज समझते हैं, हालाकि ऐसे मेहरबानो का नाम लिखना मुमकिन नहीं हो सका है।

उम्मीद है यह किताब तहकीक के तालिब–ए–इल्मो के लिये मददगार साबित होगी और शायकीन–ए–अदब से खिराज–ए–तहसीन हासिल करेगी।

खुर्शीद अहमद

बीकानेर

01.01 2001

किताबियात

1 उर्स–ए–महताब 1924
पीर सैयद हैदर शाह साहब

2. दिवान–ए–कमर 1929
सैयद यासीन अली कमर

3 सना–ए–महबूब–ए–खालिक 1932
शेख मोहम्मद इब्राहीम आजाद

4 बाग–ए–फिरदोस 1935
शेख मोहम्मद अब्दुल्लाह बेदिल

5. औराक–ए–परीशाँ 1936
हाजी मोहम्मद यूसुफ रासिख

6. जायजा–ए–जबान–ए–उर्दू 1940
अन्जुमन तरक्की–ए–उर्दू

7. दामान–ए–बागबां 1968
महकमा तालीम, राजस्थान

8. गुलजार–ए–खलील 1968
शेख खलील अहमद सम्दानी

9 होश–ओ–मस्ती 1968
दीन मोहम्मद मस्तान

10. बर्क़–ए–तजल्ला 1986
मौलवी बादशाह हुसैन राना

11. रिसाला रहनुमा–ए–तालीम, बेदिल बीकानेरी नम्बर 1986
मालिक, सरदार हरभजन सिह
एडिटर, हकीम तसखीर फहमी

12. बेदिल बीकानेरी – हयात और कारनामे 1989
डॉ. हाफिज मोहम्मद हुसैन

13 मोनोग्राफ गाजी बीकानेरी 1992
राजस्थान उर्दू अकादमी

14 मोनोग्राफ यूसुफ अजीज बीकानेरी 1994
राजस्थान उर्दू अकादमी

उर्दू ज़बान-ओ-अदब की निस्फ़ सदी
(1897-1947)

गदर और गदर के बाद बीसवीं सदी के आगाज तक बीकानेर मे उर्दू और फारसी की बहुत ज्यादा कद्र की जाती थी। उर्दू को तो सरकारी जबान का दर्जा हासिल था। 1859 ई. म महाराजा बीकानेर ने मिर्जा गालिब से फरमाइश की थी कि वो रियासत बीकानेर में राइज किये जाने वाले सिक्के के लिये कोई तहरीर तैयार करें। महाराजा ने गालिब से फारसी जबान में एक अर्जदाश्त भी तैयार कराई थी जो मलका विक्टोरिया की खिदमत मे भेजी गई थी।"

ये इक्तबास है उस मिकाले का जो जनाब खुदादाद 'मुनिस', साबिक सेक्रेट्री, राजस्थान उर्दू अकादमी ने लिखा है। ऐसा ही एक और मिकाला हमारे सामने है जो राजस्थान युनिर्वसिटी का तसलीम शुदा है। मुसन्निफ हैं डाक्टर मोहम्मद हुसेन, लेक्चरार उर्दू, डूंगर कालेज बीकानेर। वो लिखते है :–

मौलवी मोहम्मद इकबाल हुसैन 'आशिक' देहलवी 1868 मे बीकानेर आये और 1884 तक रहे। आप एक बहुत अच्छे शायर थे और गालिब से तलम्मुज रखते थे। कयाम बीकानेर के दौरान आप के तीन दीवान शाए हुए। अफकार–ए–आशिक 1301 हिजरी, इसरार–ए–आशिक 1307 हिजरी और एजाज–ए–आशिक।

इन मिकालात के अलावा भी ऐसे सबूत मौजूद हैं जिन से मालूम होता ह कि उन्नीसवी सदी मे बीकानेर मे उर्दू जबान राइज थी। 1912 तक तो इस को सरकारी जबान का दर्जा भी हासिल था। इस मजमून मे मौजूदा सदी के पहले निस्फ तक उर्दू जबान के इरतका पर एक तायराना नजर डालने की कोशिश की जा रही है।

1897 मे शेख मोहम्मद इब्राहीम 'आजाद' ने हुसेनपुर (यू पी) से आकर बीकानेर मे सकूनत इख्तयार की। उस वक्त आप की उम्र तीस बरस थी तालीम मुकम्मल हो चुकी थी। आते ही उर्दू अदब की खिदमत मे मसरूफ हो गये। आप का घर 'आजाद मन्जिल' अदबी महफिलों और मुशाएरो का मरकज रहा। आप 'बेखुद' देहलवी के शार्गिद थे। आप का दिवान 'सना–ए–महबूबे खालिक' 1932 मे शाया हुवा। आप ने वकालत का पेशा किया। 1917 से 1921 तक आप जज भी रहे थे। आप का

हलका–ए–अहबाब वसी था। अक्सर हजरात साहबे तसनीफ हुए।

आजाद के बाद मैदान–ए–उर्दू अदब मे शेख मोहम्मद अब्दुल्लाह 'बेदिल' का नाम सर–ए–फहरिस्त है। आप 1888 मे बीकानेर मे पैदा हुए। 1900 से 1908 तक सरकारी स्कूल मे तालीम पाई। 1908 मे मैट्रिक पास करने के बाद उसी स्कूल मे मुदर्रिस मुकर्रर हुए। 1917 तक दरस–ओ–तदरीस में मसरूफ रहे। आप की कोशिश से उर्दू बीकानेर मे अवाम मे फैली। 'बेदिल' एक बाकमाल शायर और मुसन्निफ थे। 1919 में आप ने बेखुद देहलवी से तलम्मुज हासिल किया। आप के मजामीन और गजले मुल्क के मुस्तनद जराइद और रसाइल 'मशहूर', 'साकी' वगैरह मे शाए होते रहे। देहली मे होने वाले सालाना मुशाएरो मे आप ने शिरकत की। जामिया मिल्लिया इस्लामिया के मुशाएरे (1959) की तो आप ने सदारत भी की। इस मुशाएरे मे दीगर मारूफ शख्सियतों के अलावा डाक्टर जाकिर हुसैन मरहूम भी थे जो बाद मे राष्ट्रपति हुए। बेदिल का मजमुआ कलाम 1935 मे 'बागे फिरदोस' के उनवान से शाय हुआ। 1917 मे बेदिल न्याय पालिका मे आ गये। 1939 मे डिस्ट्रिक्ट जज के ओहदे से रिटायर होकर वकालत का पेशा इख्तयार किया। 1970 मे वफात पाई। माहनामा 'रहनुमाए तालीम' देहली ने नवम्बर 1986 का शुमारा 'बेदिल बीकानेरी' नम्बर शाया किया।

1919 मे बीकानेर का अल्म–ए–उर्दू मौलवी बादशाह हुसैन 'राना' लखनवी के हाथ मे आया। आप डूँगर कालेज मे 'हैड मौलवी' के ओहदे पर फाइज हुए और 1943 तक उर्दू–फारसी की तालीम के जिम्मेदार रहे। आप का ये दौर बीकानेर मे 'दौर–ए–जर्रीन' कहलाने का मुस्तहक है। आप ने सैकडो शागिर्द छोडे जो बाद मे कामयाब शायर, मुसन्निफ और अदीब हुए, बडे ओहदो पर फाईज हुऐ और उर्दू की बेश बहा खिदमत की।

26 जनवरी 1935 को बीकानेर में 'बज्मे अदब' की स्थापना 'राना' ही की कोशिश से हुई। इस इदारे की रूकनियत मे उस दौर के तमाम बाकमाल लोग शामिल हुए। उस मौके पर डूँगर कालेज बीकानेर का मुशाएरा एक यादगार मुशाएरा रहा। चीफ जस्टिस मिया अहसानुलहक ने इस मुशाएरे की सदारत की थी। 'राना' के दौर मे बीकानेर मे उर्दू की कितावो की फराहमी भी शुरू हुई। डूंगर कालेज, सादूल हाई स्कूल, स्टेट लाइब्रेरी और गुण प्रकाशक सज्जन्नाल्य मे उर्दू की किताबे शामिल की गई। 'गोस्वामी तुलसी दास पर एक नजर' के उनवान से राना ने एक कितावचा जारी किया। राना ने उर्दू मे मन्जूम 'रामायण' भी लिखी थी। ये

किताबचा वेहद मकबूल हुवा। 1943 मे राना की वफात होने तक सरकारी स्कूलो मे तलवा की तादाद मे काफी इजाफा हो चुका था। शार्गिदाने 'राना' शेख मोहम्मद यूसुफ 'रासिख', शेख मोहम्मद यूसुफ़ 'अजीज' और शेख अब्दुल हवीव मुदर्रिस मुकर्रर हो चुके थे। जनाव मोहम्मद उस्मान 'आरिफ' और जनाव अघुल हसन अव्वासी (जो फौज मे अफसर हुए) 'राना' साहव के ही शार्गिद थे। 82 वर्षीय मोहम्मद इब्राहीम 'गाजी' रेलवे के रिटायर्ड सी टी आई, 'राना' ही के शागिर्द हे जो इस वक्त भी एक कामयाव शायर हैं। 'राना' की वफात के वाद हेड मौलवी का ओहदा उनके ही शार्गिद शेख माहम्मद यूसुफ 'रासिख' को मिला! 'राना' के लिए रासिख के ये ताआसुरात मुलाहिजा हो।

ये माना वात कुछ है और ही 'आजाद'–ओ–'वेदिल' की
हमारे शहर की जी भर के खिदमत की है 'राना' ने

रासिख ने अदीव–ए–फाजिल (फारसी की डिगरी) ओरिएन्टल कालेज लाहौर से 1937 मे हासिल की। आप एक वाकमाल शायर थे, आप का दीवान 'औराक–ए–परीशा' 1936 मे शाया हुवा। जिस की एक जिल्द अल्लामा इकवाल को एक मुलाकात के दौरान लाहौर मे पेश की थी।

'आजाद', 'वेदिल', 'राना' और 'रासिख' ने 1921 से 1937 तक देहली, लाहौर, लोहारू, शिमला वगैरह के मुशाएरो मे वीकानेर की नुमाइन्दगी की। इन हजरात का कलाम ओर मजामीन मुल्क के मुस्तनद जराइद–ओ–रसाइले जैसे 'मशहूर', 'साकी' वगैरह मे शाया हुए।

वावाए उर्दू मौलवी अब्दुलहक साहव ने 1930 से 1940 के दरमियान पूरे हिन्दुस्तान मे उर्दू का सर्वे कराया था। उस का जायजा वउनवान 'जाएजा–ए–जवान–ए–उर्दू' सिलसिला मतवूआत अन्जुमन तरक्की उर्दू–हिन्द, 1940 हिस्सा अव्वल वराए रियासत–ए–राजपूताना' के नाम से शाया हुवा। वीकानेर से मुतअल्लिक उस का इक्तवास मुलाहिजा फरमाए।

कदीम जमाने के कोई मुसन्निफ या शायर हमे यहा नही मिलते। अलवत्ता वाज ऐसे लोग मौजूद हैं जो काफी अर्से से वीकानेर मे रहते है जो शेर–ओ–शाएरी के जरिए उर्दू की खिदमत करते हैं या लोगो को शौक दिलाते है उन मे वहुत से हयात है मसलन –

1 मोलवी हाजी शेख मोहम्मद इब्राहीम 'आजाद'
2. मुन्शी मोहम्मद अब्दुल्लाह साहव, वी ए, 'वेदिल', डिस्ट्रिक्ट जज
3. हाजी मोहम्मद यूसुफ़ 'रासिख', सैकिन्ड मोलवी, सादुल हाई स्कूल

4 मौलवी वादशाह हुसैन 'राना'लखनवी,हैडमौलवी,सादुल हाईस्कूल
5 मुन्शी सोहन लाल, मेम्वर माल, मेम्वर कौन्सिल, बीकानेर

इस सर्वे को हमने अपने मज़ामीन में 'जायजा 1940' से सम्वोधन किया है। इस मे शामिल हजरात के अलावा भी चन्द काविले जिक्र नाम है जिन्होने उसी दौर मे अपने तौर पर उर्दू की खिदमत की। पीर सैयद यासीन अली 'कमर', जिन का 'दिवाने कमर' 1929 मे शाय हुवा, शेख निसार अहमद 'निसार' वहुत अच्छे शायर थे कलाम तो वहुत छोडा मगर कोई तसनीफ न हुई। मुन्शी उमरदीन 'शेदा', मुन्शी फेज मोहम्मद 'फैज', मुन्शी जलालुदीन 'असर', मौलवी मोहम्मद हसन सुलेमानी, मास्टर कामेश्वर दयाल 'हजी', शेख खलील अहमद 'खलील' समदानी वगेरह। सरकारी स्कूलो मे उर्दू पढने वालो की तादाद वहुत बढी। इसी के साथ उर्दू पढाने वाले असातजा की तादाद भी वढी। प. रमा शकर पाण्डे, पं. रामलोटन प्रसाद, मास्टर वली मोहम्मद, मास्टर गुलाम मुस्तफा, मास्टर गौरी सहाय, मास्टर अमर चन्द व्यास, काजी अब्दुल सत्तार साहब व मास्टर मोहम्मद यूसुफ 'अजीज' के नाम काविले जिक्र है। इन तमाम बुज़ुर्गो ने मिल कर उर्दू की वो खिदमात अन्जाम दी कि 1940–50 की दहाई तक उर्दू बीकानेर में मुकम्मल माहौल पर छा गई। अवाम मे उर्दू के लिए एक शऊर जागा। वडे कामयाव मुशायरे हुऐ। मुल्क के मुस्तनद माहनामो और जराइद में बीकानेर के उर्दूदां हजरात का जिक्र, कलाम और मजामीन शाया हुए। मुख्तलिफ औक़ात पर गजल के तरही मुशायरे हुए। पिछले कई वरसो से राजस्थान और वाहर के शायर भी (इन मुशायरो) मे शिरकत कर रहे हैं। इस तरह जेर–ए–नजर पचास साल के अर्से मे बीकानेर के शायरो और अदीबो की एक पुख्ता पहचान कायम हुई।

राजस्थानी मादरी जवान वाले लोगो ने उर्दू के मैदान में अपना लोहा दिल्ली और लखनऊ वालो से भी मनवा लिया है। यहा तक कि 1935 मे हजरत 'वेखुद' देहलवी ने बेदिल बीकानेरी को ये सनद अता फरमाई.–

"वेखुद' को अव ये साबित हुवा के 'वेदिल' ने इस दूर उफतदा की जवान पर डाका डाला है। दुनिया के मालो मताअ से और तो कुछ मेरे पास न था, एक जवान रखता था वो हजरत 'वेदिल' की नज्र हुई।"

यह दस्तरस जो अहले बीकानेर ने उर्दू मे हासिल की है वो उन की अपनी मेहनत और शऊर की देन है।

खुर्शीद अहमद

याद-ए-रफ्तगाँ

रफ्तन्द अज जहाँ
ना अज दिल-ए-माँ

(वो दुनिया से चले गए
मगर हमारे दिल से नहीं गए)

एक कौल

जिन्दा नस्ले अपने कलम से अपने गुज़रे हुए
वुजुर्गो को जिन्दा कर लेती है

दूसरा कौल

मुर्दा नस्ले अपने अमल से अपने
जिन्दो को भी मुर्दा वना देती हैं

मीर-ए-कारवाँ
शेख़ मोहम्मद इब्राहीम 'आज़ाद'

निगाह बुलन्द, सुखन दिलनवाज जा पुरसोज
यही है रख्त-ए-सफर मीर-ए-कारवा के लिये

बीकानेर मे उर्दू अदब के मीर-ए-कारवा हजरत शेख मोहम्मद इब्राहीम आजाद पर इकबाल का ये शे'र हर्फ-बा-हर्फ सादिक आता है। इकबाल ने जिस दोर मे ये श र कहा था उसी दोर मे आजाद रियासत मे उर्दू अदब के कारवा की जुमला खूबियो के साथ रहनुमाई कर रहे थे।

आज़ाद 25 फरवरी 1868 को हुसैनपुर (यू पी) मे पैदा हुए। 1897 मे बीकानेर आकर आबाद हो गए। सेठ चादमल ढड्ढा की मारफत आपकी रसाई राज दरबार मे हुई जिसके बाद आप चीफ जज के मुमताज ओहदे तक पहुचे। रिटायर होने के बाद की जिन्दगी आप ने वकालत के पेशे में गुजारी। आपने 9 जून 1947 को रहलत फरमाई। आजाद वो पहले शख्स थे जो बीकानेर को अपना वतन बनाकर आबाद हुए। अपनी हवेली तामीर की। जो मदीना मस्जिद के पास आज भी 'आज़ाद मज़िल' के नाम से मशहूर है। यही वो हवेली है जो आजाद की हयात मे शोरोफा, अदोबा और शोअरा का मरकज बनी। आजाद मजिल मे उस दौर की अदबी मजलिसे और शानदार मुशायरे होते रहे। किबना-ए-आलम, अमीर-ए-मिल्लत, मीर-ए-तरीकत सैयद जमाअत अली शाह साहब नक्शबन्दी से हल्का-ब-गोश थे। आजकल आजाद मजिल मे उन की तीसरी और चौथी पीढी आबाद है।

आजाद से पहले भी अहल-ए-उर्दू बीकानेर मे आए और रहे, लेकिन सिर्फ मुलाजमत के लिये। मुलाजमत पूरी होने पर बीकानेर को छोड गए आजाद ने मुलाजमत के साथ अपने हल्का-ए-अदब को बढाया और उसके लिये उर्दू अदब को वसीला बनाया। आजाद की ये तहरीक कामयाब हुई और बीकानेर मे उर्दू की बाकायदा दाग बेल पड़ी। आपने 1913 मे बेखुद देहलवी से तलम्मुज हासिल किया। उन्हीं दिनो बीकानेर के ही शेख मोहम्मद अब्दुल्लाह बेदिल 1908 मे मैट्रिक पास करने के बाद दरबार हाई स्कूल मे शिक्षक लग चुके थे और उर्दू, फारसी का पूरा ज्ञान रखते थे, आपके सम्पर्क मे आए। आजाद ने जनाब बेदिल का उर्दू शायरी मे

जोक–ओ–शोक देखकर 1919 मे उन्हे भी बेखुद साहब की शागिर्दी मे शामिल होने का मशवरा दिया जो उन्होने कबूल किया ओर अमल भी। उध र सदेला (लखनऊ) के मौलवी बादशाह हुसेन राना 1919 मे ही डूगर कॉलेज मे उर्दू, फारसी पढाने के लिये हेड मौलवी के पद पर मुकर्रर हुए। आजाद ने राना को भी अपने हल्के मे शामिल कर लिया। रोजगार की सहूलियत देख कर उन्होने अपने भानजे शेख निसार अहमद निसार को भी बीकानेर बुला लिया। पेशे से वकील और जोक–ए–अदब से शायर, निसार ने भी उर्दू के फरोग म नुमाया हिस्सा लिया। यू ही अपने बेटे खलील अहमद सम्दानी को शायरी को जोक–ओ–शोक दिलाया उन्होने खलील तखल्लुस इख्तियार किया। शेख मोहम्मद अब्दुल्लाह बेदिल ने भी अपने बडे साहबजादे शेख मोहम्मद यूसुफ रासिख की मेदान–ए–शायरी मे हौसला अफजाई की और 1921 मे अपने ही उस्ताद हजरत बेखुद देहलवी के तलम्मुज मे शामिल करा दिया। 1935 ई. मे मोलवी बादशाह हुसैन राना ने बज्म–ए–अदब कायम की जो आज तक किसी न किसी सूरत में काम कर रही है। इस तन्जीम को भी हजरत आजाद की सरपरस्ती हासिल थी। आजाद का जिक्र 'तजकरा 1940' मे भी है।

रासिख बीकानेरी ने इन हजरात का जिक्र यू किया है–

ये माना बात कुछ है और आजाद–ओ–बेदिल की
हमारे शहर की जी भर के खिदमत की हे राना ने

अपनी शायरी के बारे मे खुद आजाद साहब का ये कौल है के मेरी शायरी की इब्तदा बीकानेर मे आकर इश्किया शायरी से हुई, मुशी अब्दुल शकूर खा साहब मरहूम बर्क अजमेरी शागिर्द–ए–दाग देहलवी मरहूम ने इसलाह दी लेकिन बहुत ही जल्द 1321 हिजरी मे जब बसिलसिला–ए–गुलामी हजरत किबला जमाअत अली शाह साहब नक्शबन्दी, सज्जादा नशीन अलीपुर सैयदा दाखिल हुआ, तब से खुद ही ये अहद किया कि हम्द–ओ–नाअत के सिवा कुछ नही कहूगा चुनाचे ऐसा ही हुआ। आजाद जहा उस्ताद बेखुद से अकीदत रखते थे वहीं अपने शेख के भी हर दर्जे मद्दा थे। एक शेर उनका यू है:

उस्ताद ने जबान दी मजमून शेख ने
दीवान मेरा मुफ्त मे तैयार हो गया

दो चार गजले उस्ताद मरहूम मौलाना मौलवी अब्दुल हई साहब बेखुद

वदायूनी को दिखाई जो हजरत दाग देहलवी के अरशद तलामिजा मे से थे। उसके वाद 1931 मे वसिलसिला–ए–शागिर्दी हाजी सैयद वहीदुदीन अहमद साहव वेखुद देहलवी जानशीन दाग देहलवी मरहूम दाखिल हुआ। उस्ताद वेखुद 8 अप्रेल 1923 को वीकानेर आये। उस दिन आजाद मंजिल मे एक मुशायरा हुवा जिस मे आप के साथ वेदिल, रासिख, खलील ओर कुछ अन्य शायर शरीक हुए।

उर्दू अदव के फरोग मे हजरत आजाद की काविशे नाकाविल–ए–फरामोश हैं। अपनी हयात में एक सलीके के साथ उर्दू की खिदमत के जज्बे के दूसरी पीढी के शोअरा, निसार, वेदिल, राना, रासिख ओर खलील वगेरह को मुन्तकिल कर दिया। ये सिलसिला वाद में मोहम्मद उस्मान आरिफ, हुसैनुदीन फौक, मोहम्मद इब्राहीम गाजी, मोहम्मद यूसुफ़ अजीज़ और दीन मोहम्मद मस्तान वगैराह से होता हुआ आज तक जारी–ओ–सारी है। रासिख वीकानेरी का ये शे'र यहा मौजूं है –

तशक्कुर भूल जाए हजरत–ए–आजाद का रासिख
चलन अपना खिलाफे मसलक–ए–अहले वफा क्यों हो

जो अलमे उर्दू 1897 मे तनहा हज़रत आजाद ने वुलन्द किया था, रफ्ता रफ्ता एक कारवा के हाथ मे पहुच गया जिसका मीर–ए–कारवां पर हजरत आजाद मरहूम को ही कहा जा सकता है। मजरूह सुल्तानपुरी का ये शे'र यूं लगता है जैसे ला शऊरी तौर पर आजाद के लिये ही कहा गया हो –

मै अकेला ही चला था जानिव–ए–मंजिल मगर
लोग साथ आते गये ओर कारवा वनता गया।

जरस-ए-कारवां,
हाजी मोहम्मद अब्दुल्ला 'बेदिल'

बाबा-ए-उर्दू मौलवी अब्दुलहक साहब ने जो सर्वे 1940 मे शाया हुआ था उस मे बीकानेर के जिन लोगो का जिक्र हे उन मे शेख मुहम्मद अब्दुल्ला बेदिल भी शामिल हे।

शेख मोहम्मद अब्दुल्ला बेदिल 1 जनवरी 1888 को बीकानेर मे पैदा हुए। आप क वालिद शेख मोला बख्श एक मेमार आर हुनरमद थे और उन दिनो बडे पैमाने पर चल रहे इमारतो के काम से जुडे हुए थे। महलात और सरकारी दफ़्तरो मे आते जाते वो दिल ही दिल मे कामना करते थे कि काश उनका कोई बेटा भी पढ लिख कर इसी तरह दफ़्तरो मे बैठता। एक मासूम दिल से निकली ख्वाहिश को अल्लाह ने क़बूल किया। उनका छोटा बेटा मोहम्मद अब्दुल्ला तालीम से जुड गया। 1900 मे उसे दरबार हाई स्कूल मे दाखला मिला। उसने 1908 मे इलाहबाद यूनिवर्सिटी से दसवी पास की। उस वर्ष इम्तिहानात मे पूरे स्कूल मे पहला स्थान हासिल करने पर महाराजा साहब का तमगा हासिल किया। यह बेदिल साह" की कामयाबी की शुरूआत थी। 1917 में बी.ए. किया। उस वक्त की बीकानेर रियासत मे पहला मुस्लिम ग्रेज्यूएट होने का फख्र हासिल किया। 1923 मे केबिनेट सेक्रेट्री बने। 1924 मे मुन्सिफ के ओहदे पर फाईज हुए। फिर 15 बरस तक न्याय पालिका मे ही रहे इसी बीच 1933 मे डिस्ट्रिक्ट एण्ड सेशन जज हो गये और 1939 मे इसी ओहदे से रिटायर हुए। बैंच से रिटायर होने के बाद वे बार से जुड गये और कमोबेश 30 बरस तक वकालत करते हुए 4 अक्टूबर 1970 को विसाल फरमाया। वर्ष 2000 बेदिल की शिक्षा प्रारम्भ का शताब्दी वर्ष हे।

स्कूल की तालीम के दौर मे ही बेदिल ने उर्दू, फारसी पढी और वही से शायरी के मेदान मे कदम रखा। यू बेदिल बीकानेर मे जन्मे रियासत के पहले शायर हैं। उन से पहले उर्दू शायरी मे जिन लोगो के नाम आते हें वो सब बीकानेर रियासत मे बाहर से आए हुए लोग थे जिन मे कुछ यहां आबाद हुए। ज्यादा तर वापस चले गए।

1919 मे बेदिल दिल्ली गए और हजरत बेखुद देहलवी के शागिर्दो मे शामिल हो गए। उस्ताद से पहली मुलाकात का जिक्र बेदिल ने य किया है

'खाकसार का तखल्लुस वेदिल है। मिजाज शनास लोग पहचान सकते है कि इस वेदिली में क्या दर्द भरा हुआ है। अजल से कारकूनान–ए–कजा–ओ–क़द्र को मन्जूर था के इस दर्द भरे दिल का कोई खरीदार पैदा हो जाए। उसकी अमली सूरत यह पैदा हुई कि मटिया महल देहली के वादशाह–ए–सुखन के रूवरु अर्ज दाश्त पेश हुई। उन्होने इस ख्याल से के वेदिली का वेखुदी के साथ एक लगाव था, मुझ को मेखाना–ए–वेखुदी के जुर्राकशो मे दाखिल कर लिया।'

वेदिल ने इस का जिक्र यू किया हे –

तुम ही पिला गए थे हमे अपने हाथ से
उस दिन से हमने मुह न लगाया शराव को।

1936 मे जव वेदिल का दिवान 'वाग–ए–फिरदोस' शाया हुआ तो उन के उस्ताद वेखुद ने उस पर यू इजहार–ए–ख्याल किया,–

आज वेदिल का मुकम्मल दिवान मेरे सामने है। दिवान को देख कर वेखुद को अव यह सावित हुआ के वेदिल ने इस दूर उफतादा की जवान पर डाका डाला है। दुनिया के मालोमता से ओर तो कुछ मेरे पास न था एक ज़वान रखता था वो हजरत वेदिल की नज्र हुई। कलाम के देखने वाले देखे और समझेगे के वीकानेर का रहने वाला क्योकर दिल्ली की जवान हासिल कर सकता है।'

वेदिल, वीकानेर के उन गिने चुने शायरों मे आते है जिनके कलाम पर उनकी हयात मे तव्सरे, तनकीद ओर ताअस्सुरात मुल्क के मुख्तलिफ रिसालो और अखवारात मे शाया हुए। मुल्क के मशाहिर–ए–अदव जैसे प्रो मोहम्मद हुसैन सुलेमानी, अल्लामा अब्र अहसनी गन्नोरी, प्रो. रशीद अहमद सिद्दीकी, प्रो. जिया अहमद वदायूंनी, मुन्शी चॉद विहारी लाल सवा जयपुरी, सगीर अहसनी, शौक अमृतसरी, तालिव देहलवी, गुलजार देहलवी, मफ्तू कोटवी, नाज अंसारी, अव्दुल शाहिद खां शेखानी, मौलवी एहतरामुदीन शागिल जयपुरी और प्रो उनवान चिश्ती जैसे मोतवर हजरात ने इजहार–ए–खयाल किया हे। हर मुसन्निफ की राय है कि वेदिल एक वेमिस्ल शायर थे। वेदिल ने देहली, लाहोर, शिमला, जयपुर, जोधपुर, नागौर, लोहारू वगैरह मे मुशायरे पढे। देहली में एक मुशायरे (1959) की वेदिल ने सदारत भी की जिसमे डॉ जाकिर हुसैन साहब भी शामिल थे।

• मुल्क के जिन मशहूर–ओ–मारूफ शायरों के साथ वेदिल ने (1919 से

ने अपनी पुत्री सकीना को स्कूल मे दाखिल कराया तो बेदिल साहब ने भी हिम्मत करके अपनी छोटी पुत्री कुलसुम को उसके साथ स्कूल भेज दिया। कुलसुम का स्कूल मे जाना था के बावेला मच गया। मरहूम आरिफ साहब ने अपने पिता के बारे मे लिखा है के 'उनके अदालती फ़ेसले अपील मे प्रीवी कॉउन्सिल तक बहाल रहे'। लेकिन रूढीवाद की अदालत मे उनका तालीम-ए-निसवां का फेसला उलट दिया गया। कुलसुम को स्कूल छोड़ना पडा।

तालीम-ए-निसवा के साथ बेदिल का जुडाव इस से कम नहीं हुआ। स्कूल में पढने वाली सकीना ओर दूसरी लडकिया का हासला बढ़ाते रहे। सकीना, जो अब सकीना बहनजी के नाम से शहर मे मशहूर हे, ने बताया है के 'हर साल जब मे पास होकर अपना नतीजा जज साहब को (बेदिल उस वक्त तक इस नाम मशहूर हो गये थे) दिखाने जाती तो वो खुश होते, दुआऐ देते ओर पॉच रूपया इनाम भी। बेदिल के 9 पुत्र उस वक्त शिक्षा मे आ चुके थे। तालीम के मेदान मे वो मुझे अपना दसवा पुत्र कहते थे। मेरे माता पिता के अलावा जज साहब की दुआऐ भी मेरी कामयाबी की जिम्मेदार हें'।

बेदिल की ये ख्वाहिश उन की तीसरी पीढी मे थोडी-थोडी ओर चौथी पीढी मे शत प्रतिशत पूरी हुई। मोहल्ला चूनगरान मे सेकडो महिला विद्यार्थियो में (प्रेस में जाने तक) वरिष्ठतम महिला विद्यार्थी उसी कुलसुम की पोती असमा परवीन है जो डूँगर कॉलेज मे एम.एस.सी. की छात्रा हे। उसने बी.एस.सी प्रथम श्रेणी मे किया है।

रासिख बीकानेरी ने उनकी खिदमात को यो नज्म किया है :-

अहल-ए-वतन निहाल है बेदिल के फ़ेज से
हम मे भी एक बुलबुल-ए-गुलजार-ए-इल्म है

3 अक्टूबर 1999 को हल्का-ए-अदब बीकानेर ने बेदिल के 30वे यॉम-ए-वफ़ात पर एक अदबी नशस्त का एहतमाम किया जिसमे हिन्दुस्तान के मशहूर-ओ-मारूफ़ हजरात ने शिरकत की। मसनद-ए-सदारत पर जहा फख्र-ए-उर्दू पदमश्री जनाब बेकल उत्साही जेसे मशहूर-ए-जमॉ शायर रोनक अफरोज थे वही जनाब मलिकजादा मन्जूर अहमद (लखनऊ), जनाब मो अली मोज (रामपुर), जनाब खुदादाद मूनिस (अजमेर) जनाब, राही शोहाबी, जनाब मुश्ताक राकेश ओर जनाब इजहार मुसर्रत जयपुर के

अलावा मकामी हजरात जनाव मो इब्राहीम गाजी, हाजी अब्दुल मुगनी रहवर, डॉक्टर मोहम्मद हुसेन, गुलाम नवी असीर और जियाउल हसन कादरी के नाम काविल–ए–जिक्र है। इस मजलिस मे खाकसार को वेदिल वीकानेरी का ताअरूफ कराने का मोका मिला। डूँगर कालेज वीकानेर मे शोवा–ए–उर्दू के सद्र डॉ मो हुसेन ने अपने मिकाले से कुछ इक्तवास पेश किए वही खुतवा–ए–सदारत मे आली जनाव वेकल उत्साही ने भरपूर खेराज–ए–अकीदत पेश किया। राजस्थान उर्दू अकादमी के सद्र, सेक्रेट्री ओर कुछ मेम्वर हजरात ने भी शिरकत फरमाई।

इस नशस्त स मुतास्सिर हो कर राजस्थान उर्दू एकेडमी ने वदिल वीकानेरी की खिदमात का एतराफ करते हुए 'वेदिल वीकानेरी एवार्ड वराए तदरीस–ए–उर्दू' कायम किया जो पहली वार 1999–2000 के लिए जयपुर के मास्टर अब्दुल सलाम खा को मिला इस सिलसिले मे राजस्थान उर्दू एकेडमी के सेकेट्री जनाव मोअज्जम अली ने अपने ताअस्सुरात का यूँ जिक्र किया हे –

"3 अक्टूवर 1999 को मे आपके दोलत कदे पर हाजिर हुआ था। वहां हिन्दुस्तान के मशहूर–ओ–मारूफ दानिश्वर हजरात से मुलाकात हुई थी। हो सकता हे इस एवार्ड की कडी वही से मिलती हो। जनाव वेकल उत्साही साहव ने जिस खूवसूरती से आपके जद्दे आला (दादा) का जिक्र किया था उसके लिए यकीनन आप मुवारक वाद के मुस्तहक हे। मुझे उम्मीद हे कि आप इस रिवायत को आने वाली नस्लो तक एक पेगाम के साथ पहुँचाऐगे।"

वेदिल एक हमाजहत शख्सियत के मालिक थे। वो एक जज, शायर, मुदर्रिस होने से पहले एक अच्छे इन्सान थे। उन की इन्सान दोस्ती के चर्चे आज भी लोगो की जवानो पर मोजूद हे। अगरचे वो उर्दू के शायर थे मगर उन के ताल्लुकात शहर के तमाम लोगो से थे। शहर के हर तवके के अवाम उन की इज्जत करते थे। हिन्दी ओर राजस्थानी के अदीव ओर शायर भी उन की वडी कद्र करते थे। हिन्दी विश्वभारती नागरी भण्डार वीकानेर ने 1962 मे वेदिल के एजाज मे एक शानदार जलसे का इनएकाद किया ओर उन्हे अभिनन्दन पत्र पेश किया। हिन्दी ही के इनाम याफ्ता आर मुल्क भर मे मशहूर लेखक जनाव यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र का वेदिल साहव पर लेख भी एक अहम दस्तावेज की हेसियत रखता हे।

चलते चलते वेदिल साहव की गजलो के चन्द अशआर का लुत्फ

लीजिए :-

पहले खुद देखिये ये आप का नक्शा क्या है
महवे दीदार से फिर पूछीये सकता क्या है
हुस्न-ए-पिनहा का भी अल्लाह रे जलवा क्या है
दोनो आलम है तमाशाई तमाशा क्या हे
दिल-ओ-जा करके तसद्दुक ये समझ मे आया
इश्क क्या चीज हे ओर आशिक-ए-शेदा क्या है
गे ना कहता था जरा जुल्फ से वचकर चलना
इसमे फिर मेरी खता-ए-दिल-ए-शेदा क्या हे
जान भी देने को तेयार हे तुझ पर वेदिल
तुम ने इस आशिक-ए-जावाज को समझा क्या है

(2)

मिल कर तेरी निगाह से दिल कामयाव है
दुनिया कहा करे के जमाना खराव है
आईना ये वताएगा केसा शवाव है
मुझ से न पूछिये मेरी हालत खराव है
देखे फरेव-ए-हुस्न से वचता हे इन मे कोन
दिल कामयाव है के नजर कामयाव हे
तासीर-ए-आह ए दिल-ए-खाना खराव देख
वो मुजतरिव हे ओर नज़र मे हिजाव हे
रहती हे वेरूखी मे भी उन की तरफ नजर
दिल का भी इजतराव अजव इजतराव है
रग-ए-जहा पे हजरत-ए-वदिल न जाईये
आता हे जो नजर हमे धोका है ख्वाव हे

शेख़ निसार अहमद 'निसार'

शेख निसार अहमद साहब निसार के हालात-ए-जिन्दगी ओर नमूना-ए-कलाम दस्तयाब नही हो सके। उन के अहल-ए-खानदान से मेरा राबता कायम है। देखिये अल्लाह को क्या मन्जूर हो। फिर भी इतना जानता हू कि बहुत अच्छे शायर थे ओर न सिर्फ मुशायरों मे कलाम सुनाते थे बल्कि अपने दौलतकदे पर मुशायरे ओर अदबी नशस्तो का अहतमाम भी किया करते थे। मैने उनको खूब सुना है। नक्शबन्दिया सिलसिले मे हजरत जमील हुसेन साहब हाफिज पीलीभीती से बैअत थे इस लिये नात सलाम ओर मनाकिब आप के कलाम का तुर्रा-ए-इम्तियाज है। यू आप को गजल गोई मे भी महारत हासिल थी। उनका एक शेर मुझे अब भी याद है, पेश करता हू।

चार तिनके उन पे बोछारे मुबारक बाद की
आसमा की, बागबा की, बर्क की, सेय्याद की

निसार साहब की वफात 1965 मे हुई ये मेरे मुशाहिद की बात है। यूँ वो *अल्लामा बेदिल बीकानेरी के हम उम्र बुजुर्ग थे इस एतबार से उन की* पेदाइश के साल का ताआयुन किया जा सकता है। आप पेशे से वकील थे ओर फोजदारी मुकद्दमो के माहिर। इस पेशे मे आप ने खूब नाम कमाया। *हजरत शेख मोहम्मद इब्राहीम आजाद आप के मामू थे ओर उन्ही के इमा* पर आप ने हुसेनपुर से आकर बीकानेर मे सुकूनत इख्तियार की। आप का दौलतकदा आज भी निसार मन्जिल के नाम से मोजूद ओर मशहूर है। आप के खानदान के लोग इसमे आबाद है।

निसार साहब के नाम के बगेर बीकानेर मे अलमबरदारान-ए-उर्दू की फहरिस्त नामुकम्मल है। आप का जिक्र तो सर-ए-फहरिस्त चन्द शख्सियतो के साथ कद्र-ए-तफसील से आना चाहिये फिलहाल उन तफसीलात का इन्तजार है।

मौलवी बादशाह हुसैन 'राना'

वीकानेर मे जिन हज़रात ने उर्दू की परवरिश उस वक्त की जब वो अपने जमाना–ए–तिफली मे थी और जब उसको सबसे ज्यादा तवज्जो की जरूरत थी, उनमे एक नाम हकीम मोलवी वादशाह हुसेन 'राना' रादेलवी का हे।

शेख मोहम्मद इब्राहीम आजाद जिस कारवा के अमीर थे उसी के जरस का काम करने वाले हजरात म राना का नाम पेश–पेश हे। आप सन् 1890 ई मे यूपी के कस्वा विजनोर मे पेदा हुए। आपके वालिद का नाम मोहम्मद हुसेन था। आपका असल नाम जफर हुसैन था लेकिन वादशाह मिया के नाम से जाने गये। फिर उरफियत इतनी मशहूर हुई कि वो ही नाम बन गया। आपके वालिद सदेला के रहने वाले थे मगर रोजगार की तलाश मे जयपुर आ गये जहा वकील खबर सरकार मुकर्रर हुए।

राना की इब्तदाई तालीम घर पर ही हुई। उसी तालीम के सहारे अदीव फाजिल ओर मुशी फाजिल की डिग्रिया (फारसी मे) हासिल की। पहले जयपुर मे महकमा–ए–नाजिमुल उमूर मे सरिश्तेदार मुकर्रर हुए। राना सन् 1912 ई. मे बीकानेर आए उस वक्त आपको महकमा रिकार्ड मे उर्दू, फारसी के दस्तावेजो को अग्रेजी मे अनुवाद का काम सुपुर्द हुआ। जब ये काम पूरा हो गया तो राना साहब ने महाराज साहब से वापिस जाने की इजाजत तलब की। आपको वीकानेर ही मे रहने की पेशकश की गई। चूकि वहैसियत मुतरजिम राना की काबलियत से हुकूमत मुतासिर हो चुकी थी इसलिये भविष्य की जरूरतो को ध्यान मे रखकर उन्हे यही रोक लेने का इरादा किया जा चुका था। राना ने इस तजवीज को कबूल कर लिया। सन् 1919 ई. मे बाउम्र 29 वरस वीकानेर मे हेड मोलवी के ओहदे पर मुलाजमत मिली ओर फिर तायात इसी आहदे पर फाइज रहे। हर साल गर्मी की छुट्टियों मे वतन जाते ओर इख्तेताम–ए–तातीलात पर वापिस आ जाते। आपकी शादी रईस–ए–विजनोर शेख मोहम्मद अली की साहबजादी से हुई। जो एक सजीदा ओर मुतवक्किल मिजाज खातून थी ओर मशरिकी तालीम की दिलदादा थी। आपके छह लडके ओर तीन लडकिया हे। राना का कलाम उनकी ओलाद ने 1986 मे 'वर्क–ए–तजल्ला' के नाम से शाया कराया। इसका पेश लफ्ज वोही हे जो राना ने खुद अपनी हयात मे लिख

दिया था। राना ने 25 वरस तक वीकानेर मे उर्दू, फारसी की तालीम के जरिए मखलूक-ए-खुदा की खिदमत की। मरहूम शेख मोहम्मद युसूफ रासिख, जो राना साहव के पहले चद शागिर्दो मे से एक थे, ने राना की खिदमात का यू एतराफ किया हे।

ये माना वात कुछ हे ओर ही आजाद-ओ-वेदिल की
हमारे शहर की जी भर के खिदमत की हे राना ने

राना के इल्म ओर तजुर्बे की विना पर ही उन्हे उर्दू-फारसी विभाग का सदर मुकर्रर किया था। य ओहदा प्रोफेसर के वरावर था इसलिए उनके शार्गिदान ओर दीगर हजरात न उन्हे प्रोफेसर राना कह कर भी निशानदही की हे। इस ओहदे को उस जमाने मे हेड मोलवी कहा जाता था। जव 1937 मे स्कूली तालीम को डूँगर कॉलेज से अलग किया गया ओर सार्दुल हाई स्कूल की वुनियाद पडी तो राना साहव उसी ओहदे पर स्कूल मे आ गये जहा 1943 ई. मे वफात तक अपने फराइज अजाम देते रहे। आपकी वफात 16 जुलाई 1943 को सदेला मे उस वक्त हुई जव आप गर्मियो की छुट्टियो मे अपने वतन गये हुए थे उर्दू अदव का एक मुस्तकिल इदारा कायम करने की गरज से 'वज्म-ए-अदव' वीकानेर का इनएकाद किया जिसकी रस्म-ए-इफ्तेताह 26 जनवरी 1935 ई को डूगर कॉलेज के हाल मे हुई। उस मजलिस की सदारत चीफ जस्टिस मिया अहसान-उल-हक साहव ने की थी। राना के दोर मे वीकानेर मे उर्दू कितावो की फराहमी भी शुरू हुई। डूगर कॉलेज, सादुल हाई स्कूल, स्टेट लाइब्रेरी, नागरी भण्डार ओर गुण प्रकाशक सज्जनालय मे उर्दू की किताबे राना की ही देन है।

अजुमन तरक्की-ए-उर्दू (हिन्द) दिल्ली द्वारा 1940 मे प्रकाशित पुस्तक जायजा जवान-ए-उर्दू (भाग-1) मे वीकानेर के उन लोगो का जिक्र है जो शे'र-ओ-शायरी के जरिए उर्दू की खिदमत करते थे या लोगो को शौक दिलाते हे उनमे एक नाम मौलवी वादशाह हुसेन राना का भी है। 1935 मे तुलसी जयती पर वनारस हिन्दी यूनिवर्सिटी ने उर्दू नज्म के एक कुल हिन्द मुकावले का एलान किया उनवान था 'रामायण'। वीकानेर जेल के एक अफसर जो कश्मीरी व्राह्मण थे, उन दिनो आपसे हाफिज 'शीराजी' की फारसी गजले पढने आया करते थे। उन्होने उस्ताद से रामायाण पर नज्म लिखने की फरमाईश कर दी। राना साहव ने उनसे कहा कि मेरा ज्ञान सुना सुनाया हे। मे जव तक अस्ल मुसव्विदा खुद नही पढ लेता किसी

मजमून पर कलम नही उठाता। रामचरित मानस की भाषा मे नही जानता। उस अफसर ने तजवीज की कि मे किताब के कुछ हिस्से रोज आपको पढकर सुनाऊगा ओर अर्थ भी समझा दूगा। कुछ दिन ऐसा ही हुआ। राना साहब रोज जितना सुनते, नज्म करते रहते। आखिर मे उस पर नज्र–ए–सानी की ओर नज्म उस कश्मीरी के हवाले कर दी। उसने वह नज्म राना साहब के नाम से ही मुकाबले मे भिजवा दी। तीन महीने बाद यूनिवर्सिटी से तार द्वारा सूचना आई कि राना साहब की नज्म अव्वल आई है ओर उसे गोल्ड मडल का हकदार करार दिया गया हे। इस नज्म मे सीता के बयान में इस श'र का खास तोर स पसद किया गया था।

रजो हसरत की घटा सीता के दिल पर छा गई
गोया जूही की कली थी ओस से मुरझा गई

महाराज साहब बीकानेर को जब ये खबर मिली कि उनकी रियासत मे किसी को गोल्ड मेडल मिला है तो वे बहुत खुश हुए और हुकूमत की तरफ से नागरी भडार बीकानेर मे एक जलसे का एहतमाम किया। इस जलसे मे उर्दू की अजीम शख्सियत सर तेज बहादुर सप्रू ने बनारस हिन्दु युनिवर्सिटी की तरफ से राना साहब को गोल्ड मेडल पेश किया। यू राना ने बीकानेर मे साम्प्रदायिक सद्भाव ओर राष्ट्रीय एकता की मिसाल कायम की थी उनका पैगाम उनके ही एक शे'र मे मिलता है।

दुई दिल से निकले तो हो जाए जाहिर
के काबा है किसका सनम–खाना किसका

राना ने हम्द, नात और गजल सब असनाफ–ए–सुखन मे तबाअ आजमाई की थी लेकिन वो गजल पर बहुत जोर देते थे। लखनऊ ओर सदेला के कयाम के दौरान मुशी अहमद अली शोक लखनवी से इस्लाह ली ओर अतहर हापुडी से तलम्मुज का शर्फ हासिल हुआ। 1920–1940 के दरमियान दिल्ली, लाहोर और लखनऊ मे होने वाले मुशायरो मे राना दीगर शायरो के साथ बीकानेर की नुमाइदगी करते रहे। ऐसे ही एक मुशायरे मे राना खुद तो लाहौर न जासके मगर गजल कह ली। बेदिल बीकानेरी ये गजल लेकर लाहोर गये ओर मुशायरे मे राना के नाम से ही पढी। सामाइन ने खूब दाद दी। मुशायरे की सदारत मशहूर शायर 'डॉक्टर इकबाल' कर रहे थे। जब ये शे'र पढा तो अल्लामा इकबाल ने इन लफ्जो मे दाद दी 'इस रदीफ और काफिये मे इस से बेहतर शे'र अब मुमकिन नही'।

आ जाओ रात भारी है बीमार-ए-हिज्र पर
फिर भी तो रोने आओगे आखिर सहर के बाद

एक अजीम शायर के अलावा राना एक अच्छे हकीम भी थे। खुद महाराजा साहब ने उन्हे अपना पर्सनल हकीम बना लिया था। एक कामयाब इलाज के सिलसिले मे प्रशस्ति पत्र प्रदान किया था। शुरू मे खास-खास लोग ही आपसे इलाज करा पाते थे। धीरे धीरे आम लोगों ने भी इलाज के लिए राना के पास आना शुरू कर दिया। हर इतवार को मरीजो को देखते थे। कोई उजरत या फीस नही लेते थे। सारा काम खिदमत के जज्बे से करते थे।

मुंशी सोहनलाल भटनागर

जायजा 1940 मे जनाब सोहनलाल भटनागर का नाम उर्दू की खिदमत करने वालो मे शामिल हैं। लेकिन हमे खेद है कि उनके बारे मे हमें इससे ज्यादा मालूम न हो सका कि वो रियासत मे कोंसिल के मेम्बर माल थे। उन्होंने उर्दू मे बीकानेर रियासत की तारीख लिखी या उसमें सहयोग दिया। स्थानीय तोर पर हमने भटनागर सभा बीकानेर से भी सम्पर्क किया है। हम आशा करते है कि अब कुछ हालात मालूम हो जायेंगे जिन्हे आइन्दा काम मे लिया जा सकेगा।

बाबू राम प्रसाद 'तिश्ना'

आप का नाम हमें बीकानेर की दो किताबो मे मिलता है। पहली 'उर्स–ए–महताब' जो पीर सेयद हेदरशाह क़ादरी किरमानी ने 1924 ई. मे लाहोर से शाया की थी। इस मे पीर सेयद महताबशाह की तीसरी बरसी पर बीकानेर में मदकत के मुशायरे की रूदाद हे। इस मुशायरे की तरह 'आल–ए–अहमद की सिफत ओर सना करते हे"। इसकी सदारत बेदिल बीकानेरी ने की थी। तिश्ना साहब उस वक्त रियासत बीकानेर के चीफ कोर्ट मे वकील थे। उन के बारे मे इससे ज्यादा हमे कुछ मालूम नही हो सका। मुशायरे मे जो मनकबत तिश्ना सहाब ने पढी थी वो पेश है–

नाम लेवा हे तेरा नाम लिया करते है
अए शह–ए–अर्ज–ओ–समां अहद वफ़ा करते है

फर्ज पहचानतें हे फर्ज अदा करते हें
आल–ए–अहमद की सिफ़त और सना करते हे

तिश्ना गायाने तरीकत के लिये आब–ए–हयात
तुझ पे जान अहल–ए–शरीयत भी फ़िदा करते है

हम नशीं ये तो बता आज ये चर्चा क्या है
कैसा मजमा है ये क्यूं आह–ओ–बुका करते है

कोन ओझल हुवा नजरो से किसका गम है
अश्क जो ऑखों से हर वक्त वहा करते है

किसकी बरसी हे के नाले है कयामत के यहा
सीना कूवां जो यहां हश्र बपा करते हैं

सेयद–ओ–शाह महताब के जिनका है उर्स
औलियांओ मे शुमार उनका किया करते हें

बाज मे आप थे यकता–ए–ज़माना लारैब
जो सुना करते थे इकरार किया करते हें.

'तिश्ना' तक पहुँची थी तावूत–ए–मुनव्वर की जिया
दिल मे अनवार अभी तक वो रहा करते हे

दूसरी किताब का नाम जिसमे तिश्ना का जिक्र है वो गुलजार–ए–खलील है जो 1968 मे बीकानेर से शाया हुई उस मे भी आप के नाम से ज्यादा आप के बारे मे और कुछ नही है।

शेख मोहम्मद अब्दुल्लाह 'सूफ़ी'

जायजा–ए–जवान–ए–उर्दू 1940 मे एक नाम जनाब शेख़ मोहम्मद अब्दुल्ला सूफी उर्फ अमीरदूल्हा का भी हे। इससे पहले भी कुछ किताबों मे आपका जिक्र आया है (1) सना–ए–महबूब–ए–खालिक दिवान–ए–आजाद बीकानेरी (1932) (2) दीवान–ए–बदिल बीकानेरी बाग–ए–फिरदोस' (1936) और (3) उर्से–ए -महताब (1924) ऐसी ही किताब है। उर्स–ए–महताब म मरहूम सूफी साहब का उर्दू टीचर डूंगर कॉलज बीकानर कह कर मुतारुफ कराया गया ह। दीवान–ए–आजाद और बदिल मे सूफी साहब की लिखी मन्जूम तकारीज है। उर्स–ए–महताब मे आप की वो मनकबत और रूबायात हे जा हजरत पीर सेय्यद महताब शाह साहब कादरी किरमानी की तीसरी वरसी पर बीकानेर मे मनकबत के तरही मुशायरे मे सुनाई थी। मजकूरा किताब उसी मुशायरे की रूदाद है (1924) जिस मे बेदिल, रासिख, सूफी, शैदा, फैज, कतील, मजहर, नसीर, वली, रफी और राम प्रसाद तिश्ना की मनाकिब शामिल है। सूफी साहब की एक रूबाई पेश हे .–

हजरत महताब शाह बरसी तुम्हारी आज है
हर लब–ए–आशिक पर जिक्र जारी आज है
औलिया अल्लाह कब मरते हे पर्दा है फकत
वो तो जिन्दा है अबस सूफी को जारी आज है

एक शे'र भी पेश –

जो बुरे आप है, ओरो का बुरा करते है
जो भले आप है, ओरो का भला करते है।

सूफी साहब के हालात–ए–जिन्दगी ओर कलाम हासिल नही हो सके। उन के खानदान के लोगो से में राब्ता बनाये हुए हूं। उम्मीद है मजीद मालूमात हासिल हो जाऐ। मगर जेर–ए–नजर हालात, नाकाफी होते हुए भी, इस अशाअत मे इस लिए शामिल कर लिए गये हे कि सूफी साहब के जिक्र के बगेर बीकानेर मे उर्दू के अलमबरदारो की फहरिस्त नामुकम्मल रह जाती।

सैयद यासीन अली 'क़मर'

मौजूदा सदी मे अशआत–ए–कलाम के एतबार से पहले शायर का नाम पीर सेयद यासीन अली साहब क़मर है क्योंकि आपका कलाम दिवान–ए–कमर 1929 मे आगरा से शाया हुआ। आप सिर्फ नातगो शायर थे इसलिये पूरा दीवान हम्द, नात, सलाम, मनकबत वगेरह से पुर हे।

आपकी पैदाइश 1890 मे नागोर मे हुई। आपके वालिद का नाम हाजी सेयद वजीर अली साहब था। आप सादात क एक मोजिज खानदान से थे। इब्तदाई तालीम घर पर ही हुई जिसमे तालीम–ए–कुरान का जिक्र आता है। 13 बरस की उम्र मे कुरान हिफ्ज कर लिया था। उसके बाद बीकानेर तशरीफ लाये ओर मोहल्ला भिश्तीयान मे मदरसा पढाने लगे। आप ने मदरसे मे उर्दू की तालीम भी शुरू की। उस निस्बत से मोहल्ले ही मे मुकीम शेख मोहम्मद इब्राहीम आजाद के मकान पर होने वाली नशस्तो मे शामिल होने लगे। आजाद ने, जो खुद भी सिर्फ नातगो शायर थे, कमर को अपने मिजाज से करीब पाया और मोहल्ले की मस्जिद में इमामत करने के लिये राजी कर लिया। एक बार ये काम शुरू करने के बाद ताहयात इसे अन्जाम देते रहे और 1970 मे इसी काम को अन्जाम दही करते हुए वासिल बाहक हुए।

आपके दरस–ओ–तदरीस का नतीजा है कि आपके तीनो फरजन्द और मोहल्ले के बेशतर बच्चो ने उर्दू की इब्तदाई तालीम आप से हासिल की ओर फिर सरकारी स्कूलो मे दाखिले लेकर उर्दू पढी। यू शहर में उर्दू पढने वालो की तादाद में इजाफा हुआ। आपके शागिर्दो मे आपके साहबजादे सेयद मोहम्मद अमीन 'नैयर' ओर मुशी जलालुद्दीन 'असर' नातगो शायर हुए। कमर साहब के कलाम के नमूने के तौर पर नात पेश की जा रही है –

अम्बिया मे नबी लाजवाब आ गया
साथ लेकर खुदा की किताब आगया
अब कोई हश्र का हमको खटका नही
बख्शवाने को रहमत खिताब आगया
छुप गया कह के खुर्शीद–ए–महशर कही
मजहर–ए–जात–ए–हक बेनकाब आगया
नूर से जिसके रोशन है दोनो जहा
वो चमकता हुवा आफताब आगया
फिक्र–ए–हुस्न–ए–अमल चाहिये कुछ 'कमर'
के करीब अब तो योम–उल–हिसाब आगया

शेख खलील अहमद 'खलील'

शेख मोहम्मद इब्राहीम आजाद के आठ फरजन्द थे मगर जिस ने उनकी इकलीम–ए–सुखन की विरासत का हक अदा किया वो उन के सातवे साहवजादे शेख खलील अहमद हुए। आप 1905 ई. मे वीकानेर मे पैदा हुए। शायरी उन को, विरासत मे मिली लेकिन गजल गोई में उन की महारत खुद उनकी अपनी उफताद हे क्योकि उन के वालिद नात, सलाम वगेरह के अलावा कुछ कहना तर्क कर चुके थे। यू आप को शर्फ–ए–तलम्मुज अपने वालिद से ही मिला था। खलील साहव पेशे से वकील थे।

आप के कलाम को उस्ताद वेखुद दहलवी ने भी खूब पसन्द किया। 8 अप्रेल 1923 को जव वेखुद वीकानेर तशरीफ लाए थे उस वक्त तक यहा उनसे शर्फ–ए–तलम्मुज हासिल कर सकने वालो मे सिर्फ तीन हज़रात ही थे। आजाद, वेदिल, और रासिख़। हजरत वेखुद ने खलील को अपने तलम्मुज मे लेने की ख्वाहिश जाहिर कि लेकिन चूके उस वक्त वो ज़ेर–ए–तालीम थे इस लिए उन के वालिद ने इस तजवीज को कवूल नही किया ओर वकोल प्रोफेसर मोहम्मद हसन सुलेमानी, ये वात वही खत्म हो गई। यू वीकानेर मे वेखुद के शार्गिदो की तादाद तीन से आगे न वढ सकी। जनाव महशर अमरोही के वकोल उन दिनों वीकानेर मे सिर्फ दस शायर हुआ करते थे जिन मे तीन नौजवान शौरा का भी जिक्र हे। उन के नाम ओर उस वक्त उनकी उम्र यूं हे. जलालुदीन असर (16) मोहम्मद यूसुफ रासिख (17) और खलील समदानी (18)। ये तीनो वेखुद की तशरीफ आवरी से पहले ही दविस्तान–ए–शायरी मे शामिल थे। आजाद मन्जिल मे जो मुशायरा वेखुद दहलवी के एजाज मे रखा गया था उस मे खलील ने ये अशआर सुनाये थे –

ताअज्जुव है कि मुझ कजमज जवान को दाद देते हे
ये उस्ताद–ए–जमा होकर शहशाह–ए–जवा हो कर
खलील–ए–खुश नवा ने क्या जमाया रग महफिल मे
किये हे दिल मुसख्खर आज तो मोजिज वया हो कर

शेख खलील सम्दानी का मजमुआ कलाम गुलजार–ए–खलील 1968 मे शाया हुआ। उन दिनो वो सख्त अलील थे इसलिए गुलजार–ए–खलील उनके नेक ओर सालेह फरजन्द तुफैल अहमद ताविश ने तरतीव दिया ओर

अपने वालिद की हयात ही मे शाया करा दिया। ऐसा लगता है कि तीस बरस से गले के मूजी मर्ज में मुब्तला खलील अशाअत-ए-कलाम के इन्तजार मे मौत को टालते रहे थे। क्यूकि अशाअत के बाद जल्द ही (1970 ई) मे जान जान-ए-जहां आफरीं के सुपुर्द कर दी। गुलजार-ए-खलील पर मजामीन जिया अहमद बदायुनी, मोहम्मद हसन सुलैमानी, ख्वाजा मोहम्मद शफी दहलवी, असर उस्मानी जयपुरी और अन्सार महशर अब्बासी ने लिखे हैं। ये मजामीन खलील साहब के हक मे असनाद हे। इन्तसाब के सिलसिले मे "ताबिश" यू रकम परदाज है।

"वालिद-ए-मोहतरम के शे'री मजमूए को बसद इजज-ओ-नियाज मे अपने जद्द-ए-अमजद किबला-ओ-काबा रूही फिदा, मोहसिन-ए-उर्दू अदब मोहतरम हजरत शेख मोहम्मद इब्राहीम साहब आजाद नक्शबन्दी मुजददी जमाअती मरहूम-ओ-मगफूर के नाम-ए-नामी से माअनून करने की सआदत हासिल कर रहा हूं।"

मजमून की इस मंजिल तक की तरतीब मे गुलजार-ए-खलील से इस्तफादा किया गया है। अब खिराज-ए-अकीदत के तौर पर कुछ वाकयात ऐसे दर्ज कर रहा हू जो मेरे जाती मुशाहिदे की बाते है।

मेरे जद्द-ए-अमजद हजरत बेदिल बीकानेरी ने हजरत आजाद को अपना उस्ताद दर नात-गोई कहा हे (बाग-ए-फिरदौस 1935) अपने उस्ताद के साहबजादो से मोहब्बत रखना बेदिल के दिल का कुदरती जजबा था। इसको रासिख इब्न-ए-बेदिल ने भी तमाम उम्र निभाया। मुझे करीब पचास बरस पुराना एक वाकेआ याद आता है। यॉम-ए-आशूरा पर सलाम का तरही मुशाएरा हो रहा था। निजामत हजरत खलील के सुपुर्द थी। शायरों की तादाद खूब थी इस लिए मुशाएरा ता देर चला। उन दिनो मुशाएरे पढने ओर पढाने मे तावील-ओ-तकदीम का बहुत लिहाज रखा जाता था। मुशाएरा सुबह 9 बजे शुरू हुआ और इख्तातामी मराहिल तक पहुचते पहुंचते नमाज-ए-जुहर का वक्त होने लगा। उस मंजिल पर जनाब खलील समदानी ने अपना सलाम पेश करना चाहा ही था कि रासिख खडे हुए और पहले खुद पढने की पेशकश करदी। खलील साहब ने मना कर दिया। रासिख साहब अपनी बात पर कायम रहे। एक कशमकश थी जो देखने से ताअल्लुक रखती थी। आखिर रासिख ने अपनी बहतर जसामत का फायदा उठाते हुए खलील साहब को मसनद पर

विठा दिया। खलील साहव ने फिर कोई अहतजाज नही किया और रासिख ने अपना कलाम सुना दिया। घर पहुचने पर मैने वालिद साहव से इस की वजह दरयाफ्त की तो वताया कि खलील मुझ से उम्र मे वडे है ओर शायर भी अच्छे हे। वडी वात ये है कि वो हजरत 'आजाद' के साहवजादे हैं जो वीकानेर मे उर्दू के 'मीर–ए–कारवा' हैं। मरातिव का फर्क इन्सान को मलहूज रखना चाहिए फिर फारसी का एक मिसरा सुनाया जो मुझे अव तक याद हे –

गर फर्क–ए–मरातिव नकुनी, जिन्दीकी
ओर अपनी एक रूवाई सुनाई
हजरत–ए–आजाद हैं पावन्द–ए–फरमान–ए–खुदा
जिनके सदके मे नजर आते है मरदान–ए–खुदा
वन्दा–ए–मोहसिन का जो मिन्नत कशे अहसा नही
उस से क्या मुमकिन अदाए शुक्रए अहसान–ए–खुदा

इस वाकअ से मेने तीन वाते जहननशी करली थी। मीर–ए–कारवा', फर्क–ए–मरातिव ओर "मिन्नतकश–ए–अहसा' जिन को मै हमेशा मोके की मुनासिवत से, अपनी तहरीर–ओ–तकरीर मे इस्तेमाल करता रहता हूं। काश में हज़रत खलील समदानी की जात और शायरी पर कोई भरपूर मजमून लिख सकता फिर भी जो कुछ लिखा हे वो मेरे जजवात की अक्कासी है। मुझे अपने इज्ज का एतराफ हे।

हाजी मोहम्मद यूसुफ 'रासिख़'

वीसवी सदी की तीसरी–पॉचवी दहाई मे दिल्ली, पंजाव और राजपूताना के मुख्तलिफ़ शहरो मे उर्दू के मुशायरो मे वीकानेर की नुमाइदगी करने वाले चद शायरो मे एक नाम है हाजी मोहम्मद यूसुफ रासिख। यही रासिख पजाव यूनिवर्सिटी से फारसी मे 'अदीव–ए–फ़ाज़िल' की उपाधि हासिल करने वाले भी एक मात्र अदीव है।

हाजी माहम्मद यूसुफ रासिख 30 दिसम्वर 1906 को वीकानेर म पैदा हुए। घर की रिवायात के मुताविक होश सम्भालते ही तालीम हासिल करने मे लग गये। एफ़–ए (इन्टर मीजीएट) करने के वाद 1925 मे सरकारी मुलाजमत मे आ गये। सन् 1935 मे हज्ज–ए–वयतुल्ला से मुशर्रफ़ हुए। 1936 मे उन का मजमुआ–ए–कलाम ओराक–ए–परिशा शाया हुवा। 1935–37 दो साल की रूखसत ले कर ओरिएन्टल कॉलेज लाहोर से फारसी मे अदीव–ए–फ़ाज़िल किया। लाहौर मे रासिख को प्रोफ़ेसर औलाद हुसेन शादां विलगरामी की सरपरस्ती मिली। वहां उन्हे अल्लामा डॉक्टर इकवाल से भी मुलाक़ात का शर्फ़ भी हासिल हुआ। 1937 से पहले रासिख़ ने उर्दू–फारसी जनाव वादशाह हुसेन राना सन्देलवी से पढी जो उन दिनो वीकानेर के सरकारी कालेज मे हेड मोलवी थे। रासिख साहव की तालीम मे उन के वालिद का भी वड़ा हाथ रहा। अपने उस्ताद राना की वफात हो जाने पर 1943 में रासिख सादुल हाई स्कूल मे हेड मोलवी हो गये। जहा से सन् 1966 मे पेन्शन हासिल की।

रासिख के वालिद का नाम हाजी मोहम्मद अब्दुल्ला वेदिल था। वेदिल साहव गजल और नातगोई के अच्छे शायर थे। उन की नातो मे भी रग–ए–तग़ज़्ज़ुल मोजूद हे। वेदिल साहव–ए–दिवान थे (वाग–ए–फिरदौस 1935) और हजरत वेखुद दहलवी के शार्गिद (1919)। इन्होने रासिख को भी (1921 मे) वेखुद के अरशद–ए–तलामजा मे शामिल करा दिया। रासिख ने हर सिन्फ–ए–कलाम मे तवआ आजमाई की हे जो उनके मतवुआ ओर गेर मतवुआ कलाम मे वहुस्न–ओ–खूवी मोजूद हे लेकिन अपने वालिद ओर उस्ताद वेखुद की तरह नाअत और गजल रासिख के कलाम का भी तुर्रा–ए–इम्तियाज़ रहे। उन के कलाम को देखने से अन्दाजा हो जाता है कि रासिख ने उर्दू ओर फारसी के मुस्तनद शोअरा का गायर मुता'लां किया

मुख्तसर वात है ये शेख–ए–हरम से पूछो
आप मयखाने मे क्या लेते हे क्या मिलता हे
शेख था आख़िर उसे पीने के रस्ते याद थे
हल्क से उतरी दवा अगूर के पानी के साथ
मयकदे मे उसकी कुदरत का नज़र आया कमाल
ऐसी ऐसी सूरतें देखी के हेरानी हुई
पाक वाजी पर वहुत था शेख को अपनी घमण्ड
फर्द–ए–इसियॉ पढ रहे हं लोग हेरानी के साथ
जवाजे मय की तफ़सीरें जवानी याद हैं इन को
जनाव–ए–शेख़ के छाने हुए हैं सव कुतवखाने

रासिख मयकदे की इज़्जत करते है। वहां के आदाव का पूरा लिहाज रखते हे। मयकदे को वो उन गिने चुने मकामात में शामिल करते है जहां ओराफ़ा और शोराफ़ा भी पहुचते है।

तजल्ली गाह–ए–इरफां मयकदे का नाम है साकी
अदव से पीने वाले आदमी बन कर निकलते है
मयकदे का मयकदा रूसवा–ए–आलम हो गया
जाने किन कमजर्फ हाथो मे ये पयमाने गये
कहॉ वाव–ए–इजावत खटखाने जायेगे रासिख
दर–ए–पीर–ए–मुगा को उम्र भर वाव–ए–असर जाना
उतारा है अलग जाहिद का हिस्सा खुश्क हाथो से
जरा तुम अहतमाम–ए–वज्म–ए–रिन्दा देखते जाओ
मयखाना, हरम, दैर, कलीसा, दर–ए–जानां
मशहूर हैं दो चार शरीफो के ठिकाने

सन् 1968 मे महकमा–ए–तालीम राजस्थान के मुलाजिम शोअरा का इन्तखाव–ए–कलाम हुकुमत की तरफ से वउनवान 'दामान–ए–वाग़वां' शाया हुवा। रासिख के गेर मतवूआ कलाम का कुछ हिस्सा और हालात–ए–जिन्दगी इस मे शामिल हैं।

मुल्क के जिन मशाहीर से रासिख की मुलाकाते हुई या जिन के साथ रासिख ने मुशायरे पढे उन मे सर सुलेमान चीफ जज, दिल्ली, डॉक्टर जाकिर हुसेन, अल्लामा इकवाल, सर तेज वहादुर सप्रू, विस्मिल, मोलाना यास टॉकी, जिगर मुरादावादी, साकिव लखनवी, फानी वदायूनी, आनन्द

नारायण मुल्ला, कमर वाहिदी ज़यपुरी, शागिल जयपुरी, सवा जयपुरी, फिजा जयपुरी, वेखुद वदायूनी, हरिवंश राय बच्चन, महशर लखनवी, सिराज लखनवी, अतहर हापुडी, साइल दहलवी और उस्ताद वेखुद दहलवी क़ाविल–ए–जिक्र है।

2 रवीउल आख़िर 1398 हि. मुताविक 12 मार्च 1978 वरोज इतवार वकौल खुद "पेगाम–ए–अजल आमद लव्वैक व शादी गुफ्त" इस जहान–ए–फानी से कूच किया ओर वीकानेर मे अपने वालिद के पहलू मे दफन हुए। आप के दो भाई, एक वहन और दो वेटे हयात है वडे वेटे मोहम्मद यूनुस ने 1992 मे वफात पाई। मन्झले वेटे हाजी खुर्शीद अहमद और छोटे वेटे मास्टर महताव अहमद है। अब रासिख़ का सारा क़लाम (कुल्लियात–ए–रासिख) वाउनवान "ओराक–ए–परीशा" शाया हो रहा है। ये किताव तेयार है। इस मे रासिख़ के करीव छः हज़ार शे'र है जो क़रीव 600 सफहात पर फैले हुए है। इस किताव की रस्म–ए–इजरा वाकी है।

मुंशी जलालुद्दीन 'असर'

वीकानेर मे जब मोजूदा सदी के नौजवान शायरो का जिक्र आएगा तो तीन नाम बिला इख्तिलाफ लिये जाऐगे। शेख खलील अहमद खलील समदानी (पेदाइश 1905), शेख मोहम्मद यूसुफ रासिख़ (पेदाइश 1906) और मुशी जलालुद्दीन असर (पेदाइश 1907)। ये हजरात एक ही दोर के शायर थे। इन मे एक अहम वात जो मुश्तरक हे वो ये हे कि 8 अप्रेल 1923 को जब उस्ताद वेखुद देहलवी के एजाज मे आजाद मजिल में मुशायरा मुनअकिद हुवा तो नोजवान शायरो मे यही तीन हजरात थे जिन्होने अपना कलाम पढ़ा था।

मुशी जलालुद्दीन मोहल्ला भिशतियान के रहने वाले थे और असर तखल्लुस करते थे। उनके वालिद का नाम मुशी वजीर खां था जो शहर मे पीने का पानी पहुंचाने के लिये सरकारी ठेकेदार थे। ये मेहनतकश लोगो का खानदान था और पेशे मे इमान्दारी और खुदा तरसी के लिये मशहूर था। असर को होश सम्भालते ही पीर सेयद यासीन अली साहव कमर के सुपुर्द कर दिया गया जहा उन्होने कुरान और दीनी तालीम के साथ साथ उर्दू पढी ओर शेरगोई भी सीखी। इस एतवार से वो कमर साहव को अपना उस्ताद कहते थे लेकिन खुद कमर ने इस वात का एतराफ किया हे कि असर के कलाम मे इसलाह जनाव शेख निसार अहमद साहव निसार वीकानेरी की हे। निसार साहव को फन्ने उरूज मे कमाल हासिल था। वो कलाम को वेलाग, वेलोस और गहरी नजर से मुलाहेजा फरमाते थे। असर ने अपना कलाम मुशायरो मे भी सुनाया और नातख्वानी की महफिलो मे भी। आप खुद भी एक खुशगुलू नातख्वां थे। आपके थोड़े से कलाम पर मुवनी एक कितावचा 'गुलदस्ता–ए–असर' (1929) मिलता हे जिसमे चन्द नाते और एक तकरीज अज:कलम यासीन अली साहव कमर शामिल हे जिसकी जखामत 16 सफहात हे। एक नात वतोर नमुना–ए–कलाम पेश हे

मेरी फर्द–ए–अमल हे मेरा दीवा देखते जाओ
नवी का मदाहख्वा हू साज–ओ–सामा देखते जाओ
मेरे मोला मेरे आका फकत इतना सा अरमा हे
मेरे दिल म जो अरमा हे वो अरमा देखते जाओ

तुम्हे जन्नत मे जाना है तुम्हे जन्नत मे रहना है
इधर आओ मदीने का नजारा देखते जाओ

कहां मैदान-ए-महशर था कहा जन्नत का दरवाजा
शफी-ए-हश्र के क्या क्या है अहसा देखते जाओ

जवा पर है यही जिन्न-ओ-बशर हुर-ओ-मलायक के
अब आता है जमी पे माहे तावा देखते जाओ

'असर' जोश-ए-जुनू मे क्यू अभी से दश्त की ठहरी
गुलिस्ता मे बहार-ए-सुबह खन्दा देखते जाओ

लाला कामेश्वर दयाल 'हज़ी'

वीकानेर मे उर्दू अदव को फरोग देने वाले हलके के नामवर शायरो मे लाला कामेश्वर दयाल हजी का नाम मशहूर है। यो तो आप साइन्स के विद्यार्थी रहे थे मगर उर्दू जवान से जज्वाती रिश्ते की वजह एम ए उर्दू मे किया। आप का जन्म 23 फरवरी 1915 को मेरठ जिले के देहात लावड मे हुआ था। आप के पिता का नाम लाला विश्म्भर सहाय था जो एक खुशहाल काश्तकार थे और अपनी शराफत और खुश अखलाकी के लिए पूरे इलाके मे मशहूर थे।

हजी ने वी एस सी. मेरठ कॉलेज से पास की। 1938 मे आगरा यूनिवर्सिटी से एम.ए प्राईवेट किया। 1940 मे सादुल हाई स्कूल वीकानेर मे शिक्षक के पद पर नियुक्त हुए। 1942 मे आप का जोक–ए–शायरी आपको उस समय के मुस्तनद शायरो वेदिल वीकानेरी ओर निसार अहमद के करीव ले गया ओर फिर वहा से मुडकर नही देखा। उस वक्त तक आप मेदान–ए–शायरी मे नही उतरे थे। अफसाना निगार के रूप मे अपनी शिनाख्त कायम कर चुके थे। एक दिन वेदिल वीकानेरी ने आपको गजल की तरफ ध्यान देने की राय दी। यह 1942 की वात है। हजी साहव ने फरमाइश की तकमील मे एक गजल कही जिसका मतला (पहला शे'र) सुनकर ही वेदिल साहव झूम उठे और हजी साहव से गजल गोई जारी रखने को कहा। हजी ने अपनी गजले मकामी मुशायरो मे पढना शुरू कर दिया। जल्द ही सफ–ए–अव्वल मे जगह भी हासिल कर ली। आप की कहानिया ओर अफसाने, सिन्दवाद और मशहूर वगेरह उर्दू रिसालो मे छप चुके थे।

हजी ने कमोवेश 52 वरस वीकानेर मे गुजारे ओर यही आवाद हो गए। शादी भी वीकानेर की एक खातून से की। आप की तीन लडकिया हे जो सव आवाद ओर शाद हे। हजी का एक मजमुआ–ए–कलाम 'जान–ए–हजी' के उनवान से 1968 मे शाया हो गया था। आप की वेवा कमल जेन साहिवा ने आप का कलाम 'दिले हजी' आपकी वफात के वाद छपवाया जिसका रस्मुलखत हिन्दी है। मेने इस कलाम के हिन्दी अनुवाद करने मे कुछ मेहनत की थी जिसका जिक्र किताव के दीवाचे मे है। हजी साहव ने 9वी व दसवी कक्षा मे मुझे साइंस व मेथेमेटिक्स पढाई थी इसलिये वे

लेखक के उस्ताद थे। 18 जुलाई 1985 को हज़ी साहब ने वफ़ात पाई थी। यह लेख हज़ी साहब को खिराज–ए–अक़ीदत के तौर पर उनकी तेरहवी बरसी पर लिखा गया था। यहा यह बात मुझे स्वीकार करनी है कि 'दिल–ए–हज़ी' की इशाअत में कामेश्वर दयाल जी के एक भक्त और मेरे मित्र जनाब एस.पी.गुप्ता, रिटायार्ड बेक मैनेजर साहब का भी भरपूर योगदान रहा था।

राजस्थान शिक्षा विभाग ने 1968 मे एक किताब दामान–ए–बाग़बां का प्रकाशन किया था। उसमे शिक्षक शायरो की सक्षिप्त जीवन कथा चर्चा ओर कुछ कलाम छपा था। उसमे हज़ी साहब का जिक्र भी ह ओर कलाम भी। उस किताब का यह अश हजी साहब के पूरे कलाम की तस्वीर पेश करता हे।

'कलाम–ए–हज़ी का मुताअला यह हकीकत वाजह करता हे कि उन्होने बडे नज्म–ओ–जब्त और गोर–ओ–फ़िक्र से शायरी की हे। उनके यहां जहा जज़्बात का तुफान और सैलाब है वही एक ठहरे हुए शात समन्दर का सुकून भी मिलता हे। उन्होने जो कुछ कहा हे वक़्ति जोश या जिन्सी उबाल के तकाजे के तहत नही कहा है उनकी शायरी किसी जज्बा–ए–बेआबरू की तख़लीक नही। वो हवस की इस अय्यारी से खबरदार ओर चौकन्ने रहे हे जो दिल की सरमदी व अबदी लय मे मिलकर इन्सान को धोका देती रहती है। इश्क के जज्बात–ए–आलिया मे उनका पाकीजा शऊर ओर फिक्र जज्ब होकर निखरा हे और निखर कर उभरा हे।'

हजी आदमियत ओर इन्सानियत के शायर थे। उनके बहुत से शे'र उनके इस जज़्बे की अक्कासी करते हे। दो शे'र देखिये –

दीवारे क्यू बुलन्द है ये ऊच नीच की
क्या हर्ज आदमी से अगर आदमी मिले
हम एक ही मज़हब की अज़मत के नही क़ाइल
काबा भी, कलीसा भी, मदिर भी हमारा हे

हजी का यह दावा लफ्ज–बा–लफ्ज सही उतरता हे जब यह देखते हे कि इन्सान से अल्फ़ाज मे मोहब्बत रखने वाला शायर अपने अमल से भी इन्सान के दुख दर्द का मदावा करता हे। वे अपने होम्योपेथी दवाखाने पर बैठकर इन्सानो की खिदमत करते थे। क्याकि वे शायर होने के साथ साथ तबीब भी थे। उनके पास आने वालो मे मजहब, जबान और क्षेत्र का कोई

फर्क न था। उनका वही दवाखाना आज कल उनकी बेवा कमल जेन चला रही हैं। होम्योपेथी से इलाज वे अपनी सरकारी नोकरी के जमाने मे भी किया करते थे। उनका हलका–ए–दोस्तां फेला हुआ था। उनक समकालीन शायर उनके घर पर आते जाते रहते थे। वह खुद भी किसी मित्र के घर जाकर मिलने में झिझक महसूस नही करते थे।

शहर मे होने वाले हर मुशायरे और नशस्त मे वो बराबर शरीक होते ओर अच्छे कलाम पर एक खास अदाज मे दाद देते थे। कलाम तरन्नुम के साथ सुनाते थे। नोजवान शायरो की खूब हासला अफजाई करते थे। 1953 म एक नाजवान शायर फाक जार्मी (मरहूम) न वीकानर स एक रिसाला 'जाम' निकालना शुरू किया तो उसमे वढ चढकर सहयाग किया। आपके अफसाने ओर कलाम उसमे छपे। अफसोस वह रिसाला जल्द ही वद हो गया। हाल ही मे वीकानेर से प्रकाशित किताव 'शीर–ओ–शकर' मे हजी साहव के कतआत शामिल हैं।

कामेश्वर दयाल हजी, एक हमागीर शख्सियत के मालिक थे। खुश पोश ओर खुश वया थे। 35 वरस तक स्कूल के वच्चो को पढाया ओर अपने अखलाक से विद्यार्थियो, सह कर्मियो ओर अधीनस्थ कर्मचारियो मे मकवूलियात हासिल की। हायर सेकेण्डरी स्कूल के प्राचार्य तक तरक्की की। उनकी शख्सियत को जावताए तहरीर मे लाना मुश्किल हे। उन्होने अपना परिचय अपने ही एक शे'र मे दिया है।

अगर सिमटू तो मुश्क–ए–खाक से ज्यादा नहीं हू मैं
अगर फेलू हजीं तो फिर जमीन–ओ–आसमा[1] मे हू।

अव आप हजी वीकानेरी की वो गजल सुनिये जो मेदान–ए–शायरी मे आने पर उन्होंने सव से पहले लिखी थी ओर जिस को सुनकर वेदिल वीकानेरी ने कहा था कि गज़ल मुकम्मल हे, आप गजल कह सकते हे। हजी ने उसके वाद गजल के मेदान मे मुड़कर नही देखा। किसी की शागिर्दी भी नही की अलवत्ता वेदिल वीकानेरी ओर निसार वीकानेरी जेसे वुजुर्ग शायरो से मशवरा–ए–सुखन करते रहे।

आके कुछ तो करले तस्कीने दिले जानाना हम
आके थोडा सा सुना दे हिज्र का अफसाना हम
मयकदा वीरान हो जायगा• गर हम उठ गये
क्या समझता है हमे, हे जिनत–ए–मयखाना हम

गर्दिश–ए–दोरा की तल्खी भी गवारा हो गई
है बहुत ममनून तेरे गर्दिश–ए–पैमाना हम
ना खुदा जिनको मयस्सर थे किनारे जा लगे
और देखा ही किये साहिल को मायूसाना हम
परतव–ए–हुस्न–ए–अजल या फिर शोआ–ए–बर्क–ए–तूर
और क्या समझे तुझे ऐ जलवा–ए–जानाना हम
जान देना इश्क मे उनका इशारा तो ना था
शोक–ए–जा सोजी था हमको बन गये परवाना हम
इश्क की राहो में परवाने ही रहबर है हजी
अपनी ऑखो से लगाले खाक–ए–हर परवाना हम

पस–ए–नविश्त

हजी साहब ने अपनी हयात मे कुछ कलाम "जान–ए–हजी" के उनवान से देवनागरी रस्म–उल–खत मे शाया करा दिया था। ये मजमूआ 1970 में बीकानेर से शाया हुआ था लेकिन आसानी से दस्तियाब न था। खुद उनके अहल–ए–ख़ाना ने भी इस किताब की अदमयाफ्त पर अफसोस जाहिर किया। चुनाचे मन्दरजा बाला मजमून अखबरात मे इस किताब के हवाले के बगैर शाया हुआ था। दिल–ए–हजी की तरतीब के वक्त भी यह किताब मेरे सामने नही थी। इसका जिक्र मेने अपने कुछ दोस्तो से कर दिया था। दिसम्बर 2000 मे एक दिन अचानक जनाब अब्दुल गफ्फार साहब रिटायर्ड लेक्चरार ने इसे अपने कुतबखाने मे तलाश कर लिया ओर मुझे इनायत फरमाया। मैने जब इसका मुताला किया तो महसूस हुआ के काफी कलाम जो "दिल–ए–हजी" मे शामिल हुआ वो इसमें पहले ही से मोजूद हे। इसका पेश लफ़्ज भी वोही है जो 'दामान–ए–बागबां" मे शाया हो चुका था। बाहर सूरत कामेश्वर दयाल साहब हजी की ये तसनीफ काबिल–ए–ज़िक्र है।

हुसैनुद्दीन 'फ़ौक़' जामी

हुसैनुदीन फोक जामी वीकानेर के उर्दू अदव के वो फर्द हे जिन्हे दीगर अलम्वरदारो से अलग रख कर देखना होगा। इसकी वजह उनका वो काम है जो उन्होने अपने 40 वरस की मेहनत से पूरा किया। उसका नाम है मोहसिन–ए–कोनेन। ये मन्जूम सिरत–ए–रसूल सल्लल्लाहो अलेहे वसल्लम हे। फोक पर मजमून मे उनके इन इल्फाज से शुरू करता हू –

हजार हजार शुक्र हें उस रहमान–ओ–रहीम का जिसने अपने करम–ए–वे पाया से रहमतुल्लिल आलामीन सल्लल्लाहो अलेहै वसल्लम की मन्जूम सीरत–ए–पाक लिखने की साअदत अता फरमाई ओर बरसो पुराने ख्वाव को शर्मिंदा–ए–तावीर किया। दर हकीकत ये एक एजाज है सहाव–ए–सीरत का'

हर साहव–ए–ईमान को फौक के इस कौल से इत्तेफाक है। हालाकि इस कारनामे का जिक्र करने के बाद फौक पर और कुछ लिखने की जरूरत नही रह जाती लेकिन हमारा मोजू चूँकि कुछ और है इसलिए तकाजा–ए–जिक्र के तौर पर उनकी ही किताव मोहसिन–ए–कौनैन से इस्तेफादा करते हुए कुछ हालात पेश कर रहा हू।

नाम हुसैनुद्दीन, फौक तखल्लुस और अपने उस्ताद हजरत जाम की निस्वत से जामी मशहूर हुए। वालिद का नाम जहूररुद्दीन था जो एक वाअखलाक वुजुर्ग थे। फौक साहव एक जनवरी 1920 को राजस्थान के मशहूर शहर बीकानेर मे पैदा हुए। चार साल की उम्र मे साया–ए–पिदरी से महरूम हो गये। मामू कादिर वख्श और फिर भाई शमशुद्दीन और कमरुद्दीन की सरपरस्ती मे परवरिश पाई, चूकि मामू और दोनो भाई टौंक नवाव साहब के यहां मुलाजिम थे इसलिये आठ साल की उम्र मे फौक उनके साथ टौंक चले गये। यहा उनका तालीम का सिलसिला शरू हुआ, उर्दू, फारसी ओर दीनी तालीम टौक मे हाफिज मोहम्मद उमर खा साहब जाम के जेर–ए–साया हासिल की। 1939 मे दारूल उलूम खलीलीया, टांक मे दाखिल हुए फिर पजाव यूनिवर्सिटी से मुन्शी फाजिल किया। 14 साल की उम्र मे शे'र मोजू करना शुरू कर दिया। एक साल नवाब साहव टाक की सालगिरह के मोके पर जिगर मुरादावादी, जोश मलीहआवादी, सीमाव अकवरआवादी ओर सागर निजामी जेसे शोअरा की मोजूदगी मे

आपने पहली बार आल इण्डिया मुशायरा पढा। 1944 मे रतनगढ के सरकारी स्कूल मे नौकरी की लेकिन 1946 में उसे छोड दिया। 1946 और 1947 के दरमियान हिन्दुस्तान के मुख्तलिफ मकामात मे घूमते फिरते रहे। 1949 मे उस्ताद जाम की वफात के बाद बीकानेर मे एक प्राइवेट स्कूल मे नौकरी की। साथ ही बीकानेर की अदबी ओर शे'री महफिलो मे शिरकत शुरू की। ये नौकरी भी ज्यादा न चल सकी।

1949 से 1952 तक हर साल उस्ताद जाम की याद मे तरही मुशायरे किए। 1952 मे बीकानेर से एक माहनामा जारी किया जिसका नाम उस्ताद के नाम पर 'जाम' रखा लेकिन 3 महीने बाद ये रिसाला बंद हो गया। गर्दिश-ए-जाम बंद हो जाने के बाद फोक 1953 मे बबई चले गये जहां ताहयात रहे। बबई के इसी दौर में आपने वो काम सरअजाम दिया जिसका नाम मोहसिन-ए-कौनेन है। यह नज्म उनके जोर-ए-कलाम का पुख्ता सबूत है। फौक ने गज़ल के साथ कौमी नजमे और इसलाही कताअत ओर रूबाइयात पर भी तवज्जो दी। बताया गया है कि उनके तीन दीवान मौजूद हैं मगर अभी तक किसी की अशआत नही हो सकी है। उनके बारे मे मशहूर शायर सिकन्दर अली वज्द ने यू लिखा है।

'जनाब फौक जामी का कलाम उर्दू शायरी की रिवायत की पूरी अक्कासी करता है। फ़ौक़ के कलाम मे अखलाकी मजामीन के अलावा हुस्न-ओ-इश्क की अजमत और चाशनी भी मोजूद हे। ये शायरी फन की हदो ओर कवाइद मे रह कर अपना पैगाम गजल ओर नजम के जरीएकारी तक कामयाबी से पहुचाती हे, ओर ये खुसुसीयात काबिल-ए-तारीफ है।'

फौक को दीनी और समाजी भलाई के कामो मे भी दिलचस्पी थी। रतनगढ से आने के बाद मोहल्ले मे एक मदरसा कायम किया जिसे बाद मे अहले-ए-मोहल्ला ने अपने हाथो मे ले लिया। 1950 मे एक और दरसगाह की बुनियाद डाली जिसका नाम मदरसा-ए-जामिआ रखा। इन इदारो ने क़ाबिल-ए-सताइश खिदमात अजाम दी है। 1984 मे एक मोहलिक बीमारी मे मुब्तला हो गये जो आखिर कार 1996 मे उनकी वफात का सबब बनी। हालाकि मोहसिन-ए-कोनेन के अलावा भी फ़ोक ने बहुत सा नातिया कलाम छोडा लेकिन उसका शाया ना होना अफसोस की बात है।

फ़ोक जामी बीकानेर मे पेदा हुए लेकिन अपनी लम्बी उम्र मे 8-9 बरस

ही बीकानेर को दे सके। वो जहा भी रहे बीकानेर से उनका लगाव और मोहब्बत कम नही हुए। 1990 मे मोहसिन–ए–कौनैन के इजरा के बाद बीकानेर मे कयाम रहा। अहल–ए–बीकानेर ने इस काम के लिये फोक की बडी पजीराई की। मोहसिन–ए–कोनैन जैसी बेमिसाल तवील नज्म लिखने के लिए बीकानेर का उर्दू अदब उनको खिराज–ए–तहसीम पेश करता है। उनकी पहली बरसी पर उनकी ओलाद ने बीकानेर आकर एक अजीमुश्शान आल इण्डिया मुशायरा मुनअकिद किया। अहल–ए–बीकानेर ने उसमे बढ चढ कर हिस्सा लिया।

फोक जामी की एक ओर कामयाबी ये हे कि मोहसिन–ए–कोनेन का पेश लफ्ज बयनुलअकवामी सतह पर मकबूल–ओ–मारूफ आलिम–ए–दीन, फलसफी मोलाना सयेद अबुल हसन अली नदवी (मरहूम) ने लिखा है जिसमे उन्होने दुआ की हे कि अल्लाह तआला उनकी मेहनत कबूल फरमाऐ और किताब को मकबूलियत अता करे। हम इस दुआ मे शरीक हे।

अपनी इब्तदाई तालीम के बारे फौक ने ये अशआर लिखे हैं।

करू तारीफ तो तारीफ ही का मूह चिढाना है
ये अल्फाज–ए–दिगर सूरज को आइना दिखाना है
वो मेरे मोहतरम रहबर तखल्लुस जाम था जिन का
पिलाना बादा–ए–महर–ओ–मोहब्बत काम था जिन का
मेरे हर काम की हर बात की पूरी खबर रखते
फकत तालीम ही क्या तरबीयत पर भी नजर रखते
खुदा मालूम ऐसी बात क्या मुझ मे नज़र आई
कि बेटो से कही बढकर तवज्जो मुझ पर फरमाई
तराशा जा रहा हो जैसे पत्थर ख़ास हाथो से
जिला पाते हो जू अल्मास–ओ–गोहर खास हाथों से

मोहम्मद उस्मान 'आरिफ़' नक्शबंदी

मोहम्मद उस्मान आरिफ 5 अप्रैल 1923 को शेख मोहम्मद अब्दुल्ला वेदिल वीकानेरी के घर पैदा हुए। उसी दिन से आरिफ़ की खुशनसीबी का दोर शुरू हुआ। जो उनकी वफात 22 अगस्त 1995 तक निरतर जारी रहा। आरिफ़ की पैदाइश पर वेखुद देहलवी ने 8 अप्रैल 1923 को वीकानेर आकर वेदिल को मुवारक वाद दी थी। आरिफ की जिन्दगी का ये दिन भी उनकी कामयावी का पेश खेमा वन पाया।

आरिफ़ की तालीम वीकानेर मे हुई। यहा से वी ए पास करने के वाद वे 1943 मे अलीगढ़ यूनिवर्सीटी चले गये वहां से 1946 में एम.ए., एल.एल. वी प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण करके लौटे। उस समय तक वेदिल साहव डिस्ट्रिक्ट जज के ओहदे से रिटायर हो कर वीकानेर हाई कोर्ट में एक जाने माने वकील की हेसियत से पहचाने जा चुके थे। आरिफ़ को वकालत के काम के लिए जमीन हमवार मिली और सरपरस्ती भी। 1946 से 1970 तक राजस्थान हाई कोर्ट मे वकालत करने के वाद उनकी ज़िन्दगी में एक मोड़ आया। 1970 मे वो राज्य सभा के सदस्य हुए। 1976 मे दूसरी वार, और 1982 मे तीसरी वार राज्य सभा के सदस्य वने। इसी वीच 1980 से 1984 तक केन्द्रीय मत्रीमंडल के सदस्य और 1985 से 1990 तक उत्तर प्रदेश के गवर्नर रहे।

आरिफ साहव वकील रहे हो, एम पी, मिनिस्टर या गवर्नर उन्होने अपना लगाव उर्दू साहित्य से निरतर जोड़े रखा। उन्होने उर्दू मौलवी वादशाह हुसैन राना से पढी। अपनी तालीम के वारे में आरिफ साहव ने लिखा है।

'मेरे जोक़ को जिला देने मे मेरे उस्ताद–ए–मोहतरम मोलवी वादशाह हुसैन राना लखनवी का वहुत हाथ रहा है। उनमे शे'र–ए–अदव का वेपनाह जोक़ था। वो अपने तलवा को दरसी निसाव के पढ़ाने ही तक महदूद नही रखते थे वल्कि तालिव–ए–इल्म के दिल मे शे'र–ओ–अदव के लिए सही दिलचस्पी पेदा कर देते थे। मेरे मिजाज की तश्कील मे मौलवी साहव का तफहीमी उसलूव–ए–तदरीस भी शामिल है। शायरी की तरफ़ भी उसी तरीके ने मुझे राजिव किया।'

अपने घर के माहोल के वारे मे आरिफ साहव ने लिखा है:–

'मेरे यहां अदवी माहोल था। मे अपने इस माहोल मे अपने

वालिद–ए–मोहतरम ओर बडे भाई मोहम्मद यूसुफ 'रासिख' और उनके साथी शोअरा की गुफ्तगू सुनता था शायरी के फन्नी नुकात पर होने वाली बहसो पर तवज्जो दिया करता था और अदबी गुफ्तगू को शोक से सुना करता था। माहोल के साथ साथ वालिद की खुसुसी तरबीयत ने भी मेरे मिजाज को शेर–ओ–अदब की तरफ मुतवज्जो किया।'

देहली से निकलने वाले माहनामा शौला–ओ–शबनम मे आरिफ ने जोईन्ट एडीटर के फराईज अन्जाम दिये। राजस्थान उर्दू एकेडमी के सहमाई जरिदे 'नखलिस्तान' की मजलिस–ए–मुशावरत के मेम्बर रहे, पार्लियामेन्ट के मेम्बरान की उर्दू कमेटी मे नायब सदर ओर आल इडिया अन्जुम–ए–दानेश्वरा नई दिल्ली के भी नायब सदर रहे। मुल्क के मशहूर रिसालो ओर अखबारो मे आपका कलाम शाया होता रहा जिनमे शायर बबई और 'शान–ए–हिन्द' दिल्ली काबिल–ए–जिक्र हे। आपकी तसनीफत ने सबसे अहम किताब जिक्र–ए–महबूब है जो अगस्त 1980 मे बीकानेर से शाया हुई जिसमे बीकानेर के सूफी हजरत पीर महबूब बख्श चिश्ती रह. का जिक्र है। इस किताब के अशआर दूसरे मायनो मे आरिफ साहब की तसानीफ की अशआता का सगे बुनियाद है। इसके बाद 1981 और 1989 के बीच आरिफ साहब की किताबे अकीदत के फूल, लम्हों की धडकन, कलम की काश्त, नूर–ए–जिंदगी, फेजान–ए–मुस्तफा 'ग़ादि है। मगर जिक्र–ए–महबूब अपना अलग ही मकाम रखती है। एक तो केवल यही किताब आरिफ साहब की नस्र निगारी की नुमाईदा हे दूसरे ये औलिया–ए–कराम से अकीदत का सर–चश्मा हे। इस किताब को पढते–पढते पाठक अपने आप को रूहानियत मे खोया हुआ महसूस करता हे। किताब की हर स्तर जहा सूफिया–ए–कराम की अजमत का जिक्र करती है वही वो खुद आरिफ साहब के सुफियाना मिजाज की अक्कासी करती है और उनके इस दावे की तसदीक करती हे।

काटो की हिकायत हो कि फूलो की हकीकत
मुझ से सुनो मे वाकिफ–ए–असरारे चमन हू।

आईये इस वाकिफ–ए–असरार–ए–चमन की चमन बदी का जिक्र भी करते चले चमन बदी के लिए रासिख का ये शे'र अगर जहन मे रखे तो आरिफ साहब की मेहनत जल्दी समझ मे आएगी

हैं बागबा की जान पे दुनिया की आफते
बुलबुल तो बाग–बाग हे गुलजार देखकर

1946 मे तालीम की तकमील के बाद बीकानेर आते ही कुछ नौजवानो को साथ लेकर 'मशवरा–ए–सुखन की एक तहरीक चलाई जिसने जल्द ही उस वक्त के तमाम अहले उर्दू को अपने हल्के मे ले लिया। जिनमे मशहूर शायर हुसेनुद्दीन फौक, मोहम्मद इब्राहीम गाजी, मोहम्मद यूसुफ अजीज, अन्सार अहमद महशर, मिलाप चद राही हाफिज सादिक अली टोकी, पीर गुलाम सरवर वफा, गुलाम नबी असीर, ओर अल्लाह बख्श गुमनाम के अलावा लाला कामेश्वर दयाल हजी शामिल थे। रोजाना अदबी नशस्तें होती ओर बडे पेमाने के मुशायरे भी।

आरिफ साहब की हर दिल अजीजी के बावजूद खाकसारी का ये आलम था कि बिना तफरीक हर दोस्त के घर पर जाते ओर उन को अपने यहा मदूअ भी करते। उनके हम उम्र शायर असीर ने मुझे बताया कि उन में उस्तादाना खूबिया ओर सलाहियत बदर्जा मोजूद थी। मगर उन्होने कभी उस्तादी का दावा नही किया। हालाकि हम अस्र शायरो ने उनसे तजवीज भी की थी लेकिन उन्होने उस्तादी की तजवीज को मजूर नही किया बल्कि एक खादिम–ए–उर्दू और खाकसार की हैसियत को तरजीह दी।

दीवानगान–ए–इश्क को दुनिया की क्या खबर
दुनिया को छोड आऐ कही गर्द–ए–राह मे

यही से आप 22 अगस्त 1995 की शाम को बेदिल मजिल के मंजर पर आ जाए। एक कमरे मे एक चारपाई पर एक मय्यत रखी है। ये हजरत आरिफ है। आनन फानन मे वफात की खबर फैल रही है, रेडियो की खबरो मे, टीवी के प्रोग्रामो मे, अखबारो की सुर्खियो, वजीर–ए–आला, वजीर–ए–आजम से लेकर सदरे जम्हूरिया हिन्द को बजरीये वायरलैस फैक्स, तार, टेलीफ़ोन इत्तला दी जा रही है ताजीयती पैगाम आने लग गये है। खराज–ए–अक़ीदत पेश हो रहे हे। सर आमदान–ए–शहर, सियासतदा, शायर, अदीब, अहलेफन, अहले तिजारत, वकील, अखबार नवीस जमा हो रहे है। दूसरे दिन सरकारी एजाज के साथ जनाज़ा उठ रहा है। पुलिस ओर फोज के बैड मातमी धुने बजा रहे हे। जनाजे मे वर्दियो मे मल्बूस फौजी भी शामिल है। दो–तीन किलोमीटर लम्बे रास्ते के दोनो तरफ सडक के किनारे ओर मकानो की छतो पर लोगो की भारी भीड हे। अकीदत के फूलो की बारिश से गुजरता हुआ जनाजा कब्रिस्तान मे दाखिल होता है। वहा फिर तोपो की सलामी, मातमी धुने, कोमी तराना, नमाज–ए–जनाजा और फिर मजिल–ए–कब्र मे

कल से तमाम गुजरते हुए वाकयात का मुशहिदा कर रहा हूं, चाचा की मौत मेरे लिए बाप की मौत बन गई थी, क्योकि बेदिल खानदान के सबसे बुजुर्ग फर्द ने रहलत फरमाई थी। मरहूम मेरे मोहसिन भी थे। अल्लाह मगफिरत फरमाए। आमीन।

कुछ दर्द हो, कुछ सोज हो, कुछ नूर हो दिल मे
बस खाक का पुतला ही तो इसा नही होता

कब्र जबान–ए–हाल से आरिफ का ये शे'र सुना रही थी। लोग वापस हो रहे थे। यकायक मुझे आरिफ साहब के बडे भाई ओर मेरे वालिद रासिख साहब का 60 बरस पुराना ये शे'र याद आया

दरिया–ए–जिन्दगी मे पानी के नक्श थे हम
यह थी बिसात लेकिन क्या शोर था हमारा

मोहम्मद यूसुफ 'अजीज'

यह तो जाहिर हे कि वीकानेर का मौजूदा उर्दू माहौल 1897 मे हजरत मोहम्मद इब्राहीम 'आजाद' के वीकानेर आने से गरमा गया था। पिछले 100 वरस मे वीकानेर की धरती से जन्मे अनेक शायर ओर अदीव पैदा हुए और नामवरी पाई, लेकिन शुरू के पचास वरसो मे जिन लोगो ने उर्दू के क्षेत्र मे काम किया उन्हे वीकानेर के उर्दू अदव के स्तम्भ कहा जा सकता हे। ऐसे ही एक शायर जनाव मोहम्मद यूसुफ 'अजीज' गुजरे हें।

आप 3 जनवरी 1923 को वीकानेर मे पेदा हुए। वालिद का नाम मुशी मोहम्मद रमजान साहव था। सातवी क्लास से ही शे'र-ओ-शायरी का शोक लग गया। हजरत राना लखनवी से उर्दू, फारसी की तालीम हासिल की। फन-ए-शायरी मे भी उन्ही से फैज हासिल हुआ। उनकी वफात के वाद किवला वेदिल वीकानेरी से इस्लाह लेते रहे और जनाव मोहम्मद उस्मान आरिफ साहव से मशवरा करते रहे। नज़्मे और कतआत भी लिखते थे। लेकिन उनकी तवीयत को गजल से खास लगाव था। एक गजल पर आपको वीकानेर मे सोने का तमगा भी दिया गया। राजस्थान मे अलग अलग शहरो जैसे अजमेर, जयपुर, जोधपुर, कोटा, उदयपुर, भीलवाडा मे मुशायरो मे भी हिस्सा लिया। ऑल इण्डिया रेडियो, जयपुर पर भी अपना कलाम पढा। अज़ीज साहव अकसर मुशायरो मे शेरवानी ओर पायजामा पहन कर जाते ओर तहजीव और सजीदगी की जिन्दा तस्वीर नजर आते थे। लहजे मे तहाम्मुल कूट-कूट कर भरा था। कलाम तहत मे पढते थे ओर सामईन की तमाम तवज्जो अपनी तरफ कर लेते थे। वो नेकी और शराफत की जिन्दा मिसाल थे। जवान साफ सुथरी ओर मुहावरो से भरी हुई होती थे। खयालात सुलझे हुए और अंदाज़-ए-वया निखरा हुआ होता था। आपके लिये प्रोफेसर प्रेम शकर श्रीवास्तव का कहना है कि इनके यहा इसान दोस्ती ओर वतन परस्ती का जज्बा उभरा हुआ नज़र आता हे। अजीज ने कहा हे

हम इश्क के वदे हे, हम हुस्न के दीवाने
मकसूद 'अजीज' अपना कावा हे न वुत खाना।

आपका कलाम मुल्क के मुस्तनद रिसालो मे शाया होता रहा। राजस्थान शिक्षा विभाग द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'दामान-ए-वागवा' मे आपका तजकरा

और कलाम छपे हे। आप राजस्थान उर्दू अकादमी के सदस्य भी रहे। एकेडमी ने 1992 मे अजीज के कलाम और हयात पर एक गोशा भी शाया किया है।

इस मजमून को तेयार करने मे इन दोनो कितावो से इस्तफादा किया गया हे। अव्दुल मुगनी 'रहवर' के मुताविक अजमेर शरीफ के दीवान साहव की फरमाईश पर ख्वाजा साहव की जिन्दगी के हालात को फारसी से अग्रेजी मे अनुवाद का काम शुरू किया लेकिन अभी तर्जुमा तकमील को न पहुचा था कि उनकी जिन्दगी की दास्तान तकमील को पहुँच गई। 8 जुलाई 1989 का आपने 66 साल की उम्र मे यह कहते हुए वफात पाई

अफसाना–ए–हयात तो काफ़ी तवील था
दो हिचकियो मे करना पडा मुख्तसर मुझे।

तकसीम–ए–मुल्क के वाद वीकानेर मे उर्दू की तालीम वद हो चुकी थी। 1975 मे अजीज साहव ने अन्जुमन तरक्की–ए–उर्दू की शाख कायम की जिससे स्कूलो मे उर्दू फिर से शुरू हुई। आप अन्जुमन के उपाध्यक्ष रहे। दीन मोहम्मद मस्तान मरहूम अध्यक्ष थे। एक लवे समय तक आप अजमेर की दरगाह कमेटी के सदस्य भी रहे।

जिन्दगी भर तालीम मे शगफ रहा। आपकी वीवी मोहतरमा सकीना वेगम (एम ए वी एड) लेक्चरार पद से रिटायर हुई जो वीकानेर के मुस्लिम घरानो मे मेट्रिक पास करने वाली पहली खातून हे। आप की छह लडकिया हे जो सव की सव ग्रेजुएट एव पोस्ट ग्रेजुएट हे। आपके वडे साहवजादे डॉ मोहम्मद साविर शहर के मशहूर डॉक्टरो मे से एक हे। यूसुफ 'अजीज' तो चले गये लेकिन उनका यह पेगाम अव भी जिन्दा हे –

शेवा मेरा हर एक से उल्फत करना
हिन्दु से मुसलमा से मोहव्वत करना
जाइज हे वताओ तो ये किस मजहव मे
इसान का इसान से नफरत करना।

अजीज ने यारी दोस्ती खूव निवाही गाजी, वफा, सादिक, मस्तान, असीर, अख्तर ओर गुमनाम के साथ तो उनको देखा ही जाता था, वो गेर शायर हजरात को भी शायराना वातचीत सिखा गये।

अव हम यूसुफ अजीज वीकानेरी की वो गजल नकल करते हैं जिसने वहुत से मौको पर उन्हे मकवूल तरीन शायरो की सफ मे खडा कर दिया

था।

क्यू हम हे असीर–ए–गम हम खूव समझते है
जुल्फो के ये पेच–ओ–खम हम खूब समझते है
क्यूं आई हसी गुल को तुम खूव समझते हो
गिरिया हुई क्यू शवनम हम खूव समझते है
शर्मिली निगाहो मे उन शोख अदाओ मे
है मशवरे क्या वाहम हम खूव समझते हे
कोनेन समा जाऐ पेमाना हे वो दिल का
क्या चीज हे जाम–ए–जम हम खूव समझते हे
सागर से खनकते है मयख्वार के कानो मे
वरसात की ये छम–छम हम खूव समझते हे
हर रोज नया तूफा उठता है मोहव्वत मे
तूफां मे हे कितना दम हम खूव समझते हैं
ऐ दोस्त दिखाने के हमदर्द तो लाखो हैं
किसको है हमारा गम हम खूव समझते हे
इतरा ना अज़ीज इतना अव तर्क–ए–मोहव्वत पर
दावे का तेरे दमखम हम खूव समझते हे

गुलाम सरवर 'वफ़ा'

वीकानेर के उर्दू अदव की तारीख में अगर कोई ऐसा शायर तलाश किया जाए जिसने अपनी जिन्दगी के हर कदम पर, हर मकाम पर और हर मौके पर कोई कतआ या शे'र कह डाला हो तो वो शायर विला किसी इख्तलाफ के 'वफा' वीकानेरी ही हो सकते है। आप का नाम गुलाम सरवर था। आपके पिता का नाम पीर अब्दुल करीम साहव था। यह खानदान फतहपुर शेखावटी के मशहूर सज्जादा नशीनो म स था जो दरगाह दर-ए-दोलत से वावस्ता रहे। लेकिन 'वफा' के वालिद ने दरगाह तिजारत की तरफ ध्यान दिया। इसी सिलसिले मे ये वीकानेर आए और फिर यही आवाद हो गए।

वफा वीकानेर मे 1918 मे पैदा हुए। इब्तदाई उर्दू तालीम घर पर ही हुई अपने पिता के काम मे हाथ वटाते रहे और साथ ही शायरी से लगाव वढाते रहे। वफा की शायरी का दोर तो 1936 से शुरू होता हे मगर मैने उन्हे सवसे पहले 1949 के मुशायरे मे पढ़ते सुना था। उसके वाद पिछली निस्फ सदी मे शायद ही कोई प्रोग्राम होगा जिस मे वफा को न देखा गया हो। मस्जिद चूनगरान मे मनकयत का मुशायरा हो या मदीना मस्जिद चोक मे सलाम या नाअत का मुशायरा, स्वतत्रता दिवस का मुशायरा हो या गणतत्र दिवस का, होली/दिवाली के मुशायरे हो या योजना या फेमीली प्लानिग पर, आल इण्डिया रेडियो पर मुशायरा हो या उर्दू अकादमी का, सादुल क्लव, मेडिकल कॉलेज, नागरी भण्डार या सज्जन्नालय, वफा साहव जरूर शरीक होते। जयपुर, जोधपुर, सीकर, नागोर ओर राजस्थान के अन्य शहरो मे जाकर भी मुशायरे पढे। कुछ मुशायरो की रूदाद और तजकरो मे वफा का नाम मिलता हे। नागोर का एक यादगार मुशायरा तो आप की सदारत मे भी हुआ था। वफा ने यू तो हर सिन्फ मे तवा-आजमाई की ओर मकवूल हुए लेकिन कतआत, ओर वो भी फिल-वदी, ने उन्हे वहुत शोहरत दिलवाई। एक मशहूर कतआ और उसका पसमजर यू है--

दिल-ए-वीमार दुखाते हो ये क्या करते हो
डॉक्टर हो के सताते हो ये क्या करते हो
मै तुम्हे आख दिखाने के लिये आया था
तुम मुझे आख दिखाते हो ये क्या करते हो

हुआ यूं कि वफा साहब को आशूब चश्म ने घेर लिया। ईलाज के लिये सरकारी अस्पताल गये। डॉक्टर साहब अभी आए ही न थे कि मरीजो का हुजूम हो गया। आते ही डॉक्टर को एक भीड ने घेर लिया। वो घबरा गया, चपरासी को हुक्म दिया कि सब को बाहर सफबन्दी से खडा कर दो ओर एक–एक दो–दो को बारी–बारी अन्दर भेजो। मरीज काबू मे नही आ रह थे सब जल्दी मे थे क्योकि पहले ही बहुत इन्तजार कर चुक थे। 'वफा' भी अव्वल वक्त आ गये थे इस लिये उकता रह थे। खयाल आया मे बूढा आदमी हू डॉक्टर साहब को रहम आएगा किसी तरह डॉक्टर के सामने पहुँचने मे कामयाब हो गय मगर बाए महरूमी, जेस ही बोलना शुरू किया डॉक्टर गुस्सा हो गये। आख दिखा कर बाहर चले जाने का हुक्म सादर फरमा दिया। वफा की सिर्फ बीनाई कमजोर हुई थी बाकी सब जज्बे जवान थे। इन के अन्दर दबे हुऐ शायर ने सर उठाया। वही खडे खडे एक कतआ कहा और हिम्मत करके फिर कमरे मे दाखिल हो गये। इस से पहले कि डॉक्टर साहब कुछ बोलते पूरा कतआ सुना दिया। इत्तेफाक से डॉक्टर साहब शे'र फहम ओर शायरी के दिलदाह निकले। बहुत मुतासर हुए। माअजरत ख्वाही के बाद उसी वक्त इलाज तजवीज कर दिया। यह इजाजत भी दे दी कि जब जरूरत पडे आप मेरे चेम्बर मे बिला रोक टोक तशरीफ ले आया करे। इस वाकआ के चन्द रोज बाद ही मेडिकल कॉलेज मे मुशायरा हुआ वफा साहब ने पहले ये कताअ सुना दिया। पूरा हाल, डॉक्टर ओर मेडिकल तलबा से भरा था। खूब दाद मिली तालियां बजी ओर 'एक बार फिर' 'एक बार फिर' के नारे बुलन्द हुए। वो डॉक्टर साहब भी मोजूद थे इन्होने खडे हो कर इस की तसदीक कर दी।

एक बार अपने मेहरबान सियासतदाँ की सिफारिश लकर किसी अफसर के पास एक बेटे की मुलाजमत के लिये हाजिर हुए। अफसर ने सियासी रहनुमा को तो हा भरदी के मे ये काम कर दूगा मगर उस की नियत मे खलल था। 'वफा' साहब मरदुम शनास आदमी थे, इस की हू हा सुनकर वापिस आगये। राह चलते एक कताअ कहा ओर अपने दोस्त के घर जाकर सुना दिया।

फैल के बैठा हे महमूद की कुर्सी पे अयाज
मेरी आखो ने बडे हेफ का मन्जर देखा
वक्त की बात है क्या वक्त ने पलटा खाया
कच्चे ढेले को भी बुनियाद का पत्थर देखा

ये अफसर लहीम शहीम बेडोला था। थोडे दिनो पहले तक एक बे असर ओर गुमनाम था। एक दम बदले हालात मे कुछ आगे बढ गया था।

एक बार इलाज के सिलसिले मे मे 'वफ़ा' साहब का खून निकाला गया। कोई जाच होनी थी। खून तो कम था ही बहुत मुश्किल से रग हाथ आई ओर खून का नमूना ले लिया गया। मगर 'रिपोर्ट बाद मे दी जाएगी' कह कर वफा को रवाना कर दिया गया। दो दिन बाद जब पहुचे तो रिपोर्ट नही मिली। जवाब मिला आप का खून खो गया। दोबारा लिया जाएगा। वफा साहब ने कहा खून तो पश नही कर सकता एक कतआ पश हे–

तुम ने मुश्किल से दिया तो क्या हुआ
मेहरबानी से किसी की खो गया
क्या रपट इस की मुझे मिलती वफ़ा
खून था शायर का पानी हो गया

वफा साहब की जिन्दगी मे ऐसे वाकआत पेश आते ही रहे ओर कतआत मे बदलते गये। यू भी वफा साहब की हस्सास तबीअत ने गर्दिश–ए–दौरां को अपने कतआत–ओ–अशआर मे ढाला है। चन्द कतआत मजीद मुलाहिजा हो।

क्या इसी का नाम दुनिया हे वफा
मुझ को रह रह कर ख्याल आता रहा
दोस्तो ने वो दिये मिल के फरेब
दुश्मनो का भी गिला जाता रहा

अदब की महफिलो मे ग़ेर शायर
ओर इस पर कारवा दर कारवा हे
वफा ये दोर रूकने के नही हे
बडे उचे यहा पीर–ए–मुगा हे

था कभी शोख अदाओ के सहारे जीना
रह गया अब तो दवाओ के सहारे जीना
जिन्दगी अब मुझे इस मोड पे ले आई
जहा रहता है दुआओ के सहारे जीना

वफा की गजल दिल्ली जबान की रिवायती गजल होती थी। बेहद

दिलकश और दिलनवाज। एक गजल मुजाहिजा हो.–

ये फसाना है वफा की शोमी–ए–तकदीर का
मिटते मिटने मिट गया है नक्श भी तस्वीर का
ये खुलासा है हमारे इश्क की तहरीर का
एक उनवान बन गया है हुस्न–ए–आलमगीर का
दर्द सीने मे खलिश दिल मे जिगर मे चुटकिया
वाह क्या अच्छा निशाना है तुम्हारे तीर का
हर अदा तौबा शिकन वो ओर ये खामोश हुस्न
तुझ से मिलता ही नही नक्शा तेरी तस्वीर का
हसरत–ओ–उम्मीद, अरमा सब के सब मातम मे है
क्या जनाजा उठ गया है आह–ए–बे तासीर का
तुम भी सुन लो अब खुदारा दो घडी की बात हैं
फैसला होने को है बीमार की तकदीर का
आप की बख्शिश है ये आप का इनआम है
मे जो मालिक हो गया हू दर्द की जागीर का
आज तक देखा न हो जिस ने वफा को देख ले
आईना है गम की जीती जागती तस्वीर का

'वफा' ने अच्छी उमर पाई मगर ज्यादा हिस्सा तंगदस्ती मे गुजरा। 8 दिसम्बर 1991 को 73 वर्ष की उमर मे वफात पाई और बीकानेर के कब्रिस्तान मे दफन हुए। 'वफा' की जिन्दगी पर रासिख बीकानेरी का यह शे'र सादिक आता है –

अहल–ए–जहां ने खाक न की जिन्दगी मे कद्र
अब रो रहे है रासिख–ए–जन्नत मकाम को

दीन मोहम्मद 'मस्तान'

वीकानेर मे अगर किसी ऐसे शायर को तलाश करना हो जिसका एक शे'र खुद उसकी 40–45 साल की तखलीकात का मजर हो तो वो शायर दीन मोहम्मद मस्तान वीकानेरी के अलावा कोई ओर नही हो सकता। वो फरमाते हे –

दुनिया से जो डरते थे उन्हे खा गई दुनिया
वो छा गये दुनिया पे जो डरते थे खुदा से

मस्तान यू तो अपने वाकी कलाम के लिए भी वहुत मशहूर हुए हे लेकिन जेर–ए–नजर शे'र ने उन्हे ओर ज्यादा मकबूल वना दिया हे।

मस्तान 1921 ई मे वीकानेर मे पेदा हुए, उनके वालिद का नाम अब्दुल्ला खा था। ये एक मेहनत कश खानदान था जो अव तक तालीम से करीव नही हुआ था। छोटी उम्र मे ही इस खानदान के लोग फ़िक्र–ए–मआश मे लग जाते थे। यही वात खुद मस्तान पर भी सादिक आती है।

मस्तान वीकानेरी की शख्सियत ओर कलाम पर उनके उस्ताद मोहम्मद यूसुफ 'सागर' अजमेरी का यह कहना ही काफी है। 'मस्तान वीकानेरी का नाम सुनते ही वरसो पहले की एक मासूम शक्ल याद आ जाती हे। ये मासूम शक्ल 14 साला लडके की हे जो अपनी सुरीली ओर मस्ताना आवाज से हर इन्सान की तवज्जो अपनी तरफ मवजूल कर लेता था। किसे खवर थी के यही खुशगुलू ओर भोली भाली शक्ल का लडका एक दिन मुल्क का अजीम फनकार होकर राहे–अदव को रोशनी वख्शेगा।'

मस्तान का नाम दीन मोहम्मद था लेकिन वो अपने तखल्लुस से ऐसे मशहूर हुए कि कभी कभी तो दफ्तर का खजाची उनकी तनख्वाह चुकाते वक्त हिचकिचा जाता था। तालीम के नाम पर पहले उनकी वासुरी ओर फिर दफ पर ही इक्तफा करना पडेगा। जनाव अमीनुदीन ने यू लिखा है

'मस्तान वो शख्सियत हे जिसके लिये आज तक कोई ये दावा पेश नही कर सका कि यह मेरा हम जमाअत (क्लास फैलो) हे'

यू मस्तान की जात ने ये सावित कर दिया कि शायर होता हे, वनाया या घडा नहीं जा सकता। हा अगर हमअस्र शोरा का तालीमी मेयार अगर किसी तरह इस कमी को पूरा कर सके तो फिर शेख निसार अहमद साहव निसार वकील, शेख मोहम्मद अब्दुल्ला (वी ए) डिस्ट्रिक्ट जज, शेख मोहम्मद

यूसुफ रासिख अदीब–ए–फाजिल, मोहम्मद उस्मान आरिफ वकील (एम.ए. एल.एल.बी) लाला कामेश्वर दयाल हजी एम.ए. बी.एड. (प्रिन्सिपल) मास्टर मोहम्मद अयूब (एम.ए. बी.एड) अब्दुल मुगनी रहबर (आर.ए.एस.) और दीगर बेशुमार शोरा के नाम गिनवाए जा सकते है जिन के साथ कमोबेश 40 बरस तक मस्तान ने न सिर्फ मुशायरे पढे बल्कि अदबी नशस्तो मे भी हिस्सा लिया। न खुद मे अहसास यह पैदा होने दिया कि उनका तालीमी मियार कम हे ओर न किसी हमअस्र शायर या सामइन को यह अहसास हो सका कि वो किसी कम तालीम याफ्ता शायर को सुन रह हे।

मस्तान छोटी उम्र म पुलिस के एक मेहरबान अफसर की नजर मे उस वक्त आ गये जब वो अफसर घोडे पर सवार हो कर शहर मे गश्त दोरान मोहल्ला भिश्तियान से भी गुजरे। मस्तान का मकान इसी मोहल्ले मे है। उस वक्त मस्तान डफ बजा कर कोई लोक गीत गा रहे थे पुलिस आफिसर ने मस्तान को डफ़ लेकर अपने मकान पर आने के लिए कहा। दूसरे दिन मस्तान पहुच गये और फिर कभी पलट कर नहीं देखा। एक मुनासिब मोके पर पुलिस मे मुलाजिम हो गये। मुलाजमत के दौर मे वो पुलिस के मकामी ओर सूबाई आला हाकिमो के करीब रहे। जब मस्तान का कलाम होश–ओ–मस्ती 1969 में देवनागरी रस्मुलखत मे शाया हुआ तो उसमे पुलिस के उन मेहरबान अफ़सरो का एहसान मन्दी के साथ जिक्र किया।

अपने माहोल से मुतासिर होकर मस्तान शराब नोशी के मैदान मे आकर उन नाम निहाद समाजी ठेकेदारो की ताअनाजनी का शिकार हो गये जो खुद को मुत्तकी ओर पाकबाज कहते नही थकते हे लेकिन अपने गरेबा मे झाक कर नही देखते। ऐसे लोगो को मस्तान ने अपने एक शे'र मे यू जवाब दिया हे।

खुदा मालूम होगा हश्र क्या मयकश का जाहिद का
इधर अश्क–ए–नदामत है उधर तसबीह के दाने

मस्तान बुर्जुगान–ए–दीन के मजारो पर खूब हाजिर होते थे। नागोर के एक मजार बुजुर्ग अहमद अली बाबा पर मस्तान की मनकबत बहुत मशहूर हुई यूही बीकानेर के पीर महबूब बख़्श चिश्ती साहब के मजार पर सालाना होने वाले मुशायरे मे बाकायदा शामिल रहे। उनकी मनकबत का एक शे'र है

दरे चिश्ती की इस दम ये इक ताजा करामत है
यहा मस्तान जैसे रिन्द को भी पारसा देखा

मस्तान ने हर सीगा–ए–सुखन मे कविश की हे लेकिन नज्म गोई ने उनको ज्यादा मकवूलियत अता की। राजस्थान के हर शहर मे मस्तान ने मुशायरे पढे ओर दाद हासिल की। उन्होने एक नज्म *'वीवी से खिताव'* मे अपनी कमजोर माली हालत को ऐसे दर्द अगेज अंदाज मे पेश किया हे कि सुनने वाले को आसूओ के करीव कर देता हे। इस नज्म का आखिरी वन्द यू हे –

अव तो ये कहना हे तुझ से ऐ मेरे घर की वहार
जिन्दगी म लाख आए गर्दिश–ए–लेल–ओ–निहार
हाथ स छूट न लेकिन दामन–ए–सब्र–ओ–करार
आ गये दुनिया मे अव तो जिस तरह गुजरे गुजार
मान ले इसको ये मेरा हुक्म हे या अर्ज़ है
जिन्दगी दुश्वार हो जाए तो जीना फर्ज हे

मस्तान की चन्द मकवूल नज्मो के नाम हे *वोर्डर का सिपाही, झूठ, शरावी, इशारा, शहीद–ए–नपथूला, रिक्शे वाला* हे मगर शायर महशर अमरोहवी ने मस्तान की नज्मो के वारे मे यू लिखा है 'नज्म मस्तान के मखसूस मिजाज की तरजुमान है। इनके जोहर इस मेदान मे खूव खिलते हे। इनकी नज्मो मे तेज रो दरिया की सी रवानी हे जो अपने साथ कारी को वहा ले जाती है। इनके यहा आमद की रो भी हे और लहजे की खनक भी'

मस्तान की वफात 17 अक्टूवर 1983 को हुई उसने इत्तेफाक से उस दिन 'यॉम–ए–आशूरा' था जो सेयदना इमाम हुसैन की शहादत का दिन भी हे। मस्तान को हजरत इमाम आली मकाम से बहुत अकीदत थी ओर हर साल उस दिन वो शोहदा–ए–करवला की वारगाह मे तरही मुशायरा के एहतमाम किया करते थे। ऐसे ही सलाम के एक मुशायरे मे उन्होने वो मशहूर सलाम भी कहा था जिसके एक शे'र से इस तहरीर का आगाज किया गया है। यू ही मस्तान पर इश्क–ए–रसूल का गलवा भी था। उनकी ये ख्वाहीश थी कि वो दरवार–ए–मदीना (स) मे हाजिर हो। नाअत के एक मुशायरे मे अपनी इस ख्वाहिश को यू नज्म किया है।

यही इक अर्ज हे मस्तान सरकार–ए–दो आलम से
कजा आने से पहले इक वुलावा आप का आए

शेख निसार अहमद साहव वकील जो उर्दू की एक माए नाज हस्ती थे

ने अपनी हयात मे भिश्तियो के मोहल्ले मे रबीउल अव्वल के महीने मे नाअत के ओर मोहर्रम के महीने मे सलाम के तरही मुशायरो का सिलसिला शुरू किया था।

इन दोनो मुशायरो का एहतमाम मस्तान का ही किया हुवा हे और 50 वर्ष से ज्यादा का अर्सा हुवा ये मुशायरे लगातार हो रहे हे मस्तान की वफात के बाद इन मुशायरों का एहतमाम उनके ही एक अजीज अमीनुदीन कर रहे है जिसमे जानशीन–ए–मस्तान हनीफ शमीम का ताआवुन भी काबिल–ए–ज़िक्र है।

मस्तान की शख्सियत और कलाम पर जितना लिखा जाएगा वो कम होगा क्योंकि कही न कही कलम को रूकना ही होता हे इसलिए अपना ये मज़मून मस्तान के चन्द शे'र सुना कर मुकम्मल करता हू।

क्या जला फिर कोई आशिया दोस्तो
उठ रहा हे चमन से धुआ दोस्तो
हर कदम पर खुदा याद आने लगा
तुम ने एसा लिये इम्तिहा दोस्तो
जिनकी कल मयकदे तक रसाई न थी
है वही आज पीर–ए–मुगा दोस्तो

रिन्द हू, रिन्द हू इस कौल से इन्कार नही
उसका मुजरिम हू जमाने का खतावार नही
मस्तो–बे–खुद हू दगा बाजा–जफाकार नही
रूहे–मयखाना हू मगरूर–ओ–दिल–आजार नही
मे शराबी हू मगर इतना गुनहगार नही

मस्तान का बहुत सारा कलाम छपने से रह गया है। मस्तान उर्दू अकादमी बीकानेर को इस तरफ ध्यान देना चाहिये।

हाफिज़ सादिक़ अली 'सादिक़'

आपका नाम सादिक अली था। अपने नाम को तखल्लुस भी बनाया। आपके वालिद का नाम जनाव सआदत अली था जो टोंक के रहने वाले थे। सादिक की विलादत भी टोंक मे 1928 मे हुई। वो नवाव साहव का जमाना था। अरवी, फारसी और उर्दू का दौर दोरा था। कम–ओ–वेश हर शख्स उर्दू जानता था। कुछ वलन्द पाया आलिम, शायर और अदीव भी हुए। दारूल उलूम खलीलीया सरचश्माए इल्म था जो अव तक मोजूद हे। ऐसे माहोल मे सादिक का उर्दू सीखना ओर कुरान हिफ्ज कर लेना कुदरती वात थी।

आप पेशे से दर्जी थे। हिफ्ज–ए–कुरान के वाद आपकी शादी वीकानेर के एक दीनदार वजुर्ग सेयद मोहसिन अली साहव की साहवजादी से हुई। इसके वाद आप ने वीकानेर मे सूकुनत कर ली। यहां आप एक दीनी मदरसे मे दरस–ओ–तदरीस का काम करने लगे। सिलाई का काम भी घर पर जारी रखा। टोंक से निकल कर वीकानेर के जिस अदवी माहौल मे आप ने क़दम रखा वो शे'र गोई के लिये निहायत मौजू था। इस पर आप को शेख निसार अहमद निसार का तलम्मुज ओर वेदिल वीकानेरी का दस्त–ए–शफकत हासिल होना सोने पर सुहागा सावित हुआ। जल्द ही आप अपने हम उम्र शायरो मे घुल मिल गये और मुशायरो में शिरकत करने लगे। मेंने उन्हे पहली वार 1945 के आसपास नाअत के उस मुशायरे मे अपना कलाम पेश करते हुए सुना जिसका मिसरा–ए–तरह था "जिसने खुदा के हुस्न को देखा तुम्ही तो हो"। इसके वाद सादिक ताहयात शे'रगोई से मुसलसल जुडे रहे ओर हर सिन्फ–ए–सुखन मे तवाअ आजमाई की। आप को नाअत गोई मे महारत हासिल हुई। पीर महवूव वख्श चिश्ती (र) के उर्स पर सुनाई गई एक मनकवत वतोर नमूना पेश हे–

सन्जर के चमन का तू महकता गुलाव हे
लख्त–ए–दिल–ए–फरीद तेरा क्या जवाव हे
दादा को तेरे गन्ज–ए–शकर का खिताव हे
शीरी सुखन तू इसलिये इज्जत म'आव हे
गर्दिश मे महताव हे और आफताव हे
हर दोर मे गुलाम तेरा कामयाव हे
हे खाना–ए–खुदा मे तेरा घर वना हुआ
यूँ तेरे दर की हाजरी दूना सवाव हे

वो दोलत–ए–खुलूस जो सब के लिये नही
तेरे करम से मुझ को वही दस्तयाब है
मन्जूर क्यो ना मेरी हिफाजत खुदा को हो
महफूज मेरे दिल मे खुदा की किताब हे
खामोश क्यूँ रहे ये सर–ए–महफिल–ए–सुखन
'सादिक' खुदा के फज्ल से हाजिर जवाब हे

सादिक जहा अपना कलाम झूम झूम कर सुनाते थे वही टोक की शे'री और अदबी नशस्तो को भूले नही थे। नवाब साहब के यहा "चार बेत" शे'र गाई का एक अजब सिलसिला था। एक नशस्त का जिक्र मुझ से किया था। मोजू था "कातिल नही"। पहली पार्टी ने ये चार मिसर कहे–

सरीहन मेरे खू से आलूदा दामा
दरीदा गरीबा वो गेसू परीशा
थे मेरी नाश पर इस तरह वो गिरया
जो देखे वो समझे के कातिल नही हे

दूसरी पार्टी ने फोरन ही ये चार मिसरे कहे–

सर–ए–हश्र वो रौब छाया था उनका
दम–ए–शिकवा लुकनत जबा कर रही थी
मै कहने को ये था के कातिल यही हे
मगर मुह से निकला के कातिल नही . है

सादिक बहुत ही जरीफ मिजाज रखते थे। पढने का अन्दाज नजाकत आमेज था। यार दोस्तो के साथ बेतकल्लुफ थे। हल्का–ए–यारा भी वसीअ था। मजाक मे दोस्त उन की जल्दी वफात की इत्तला देते तो उसे खुश मिजाजी के साथ कुबूल करते हुए फरमाया करते थे के में जहा रहूगा आप हजरात को बुला लूगा, महफिल यू ही गर्म रहेगी। अजीब इत्तेफाक हे के 1980 मे इस मजलिस से दार–ए–बका की तरफ सफर करने वाले सादिक पहले शख्स हुए ओर फिर कजा–ए–इलाही से एक एक कर उन के ज्यादातर दोस्त भी उन से जा मिले। हमारी दुआ हे कि सादिक की मजलिस–ए–यारा यू ही गर्म रहे।

सादिक ने 1980 मे वफात पाई। आप की अहलिया और ओलाद बीकानेर मे आबाद हे लेकिन कलाम की अशाअत करा सकना उन के बस की बात नही हे।

साज़-ए-हस्ती

फहरिस्त

तुम सलामत रहो हजार वरस
हर वरस के हो दिन पचास हजार
(गालिव)

मोहम्मद इब्राहीम 'ग़ाज़ी'

वीकानेर की उर्दू से जुडी शख़्सियतो मे कम ही ऐसे है जो अपनी जिन्दगी की नौवी दहाई (नवें दशक) मे प्रवेश कर पाये। हमारी याददाश्त मे चालू सदी मे शेख मोहम्मद इब्राहीम 'आजाद' ओर शेख मोहम्मद अब्दुल्ला 'वेदिल' के वाद इस वक्त गाजी वीकानेरी रौनक अफ़रोज है। आप अव तक अपने जीवन मे 82 होलिया खेल चुके है। आप होली के दिन सम्वत् 1975 अर्थात सन 1918 मे पेदा हुए थे।

ग़ाज़ी वीकानरी का नाम मोहम्मद इब्राहीम हे आप के पिता का नाम फाजल खॉ था। आप वीकानेर के सिपाही समाज से ताआल्लुक रखते है। यह लोग उस जमाने में खेती वाड़ी और गौपालन का काम किया करते थे या राजमहल में चोकीदारी आदि। कुछ लोग पुलिस और फौज मे मुलाजिम भी हुए। शिक्षा का स्तर नाम मात्र था। ग़ाजी को वीकानेर रियासत के सिपाही समाज मे पहला मैट्रिक पास होने का इम्तियाज़ हासिल है। उन्होने 1937 मे मैट्रिक पास किया। इस का श्रेय जहा उनके पिता को जाता हे वही पडोस के मोहल्ले मे रहने वाले शेख मोहम्मद अब्दुल्ला 'वेदिल' को भी वे अपना मोहसिन मानते है। वेदिल साहव से ही उन्होने शायरी का शऊर सीखा जो खुद एक वुलन्द पाया शायर थे। गाजी ने उर्दू फ़ारसी सादुल हाई स्कूल वीकानेर मे हैड मौलवी जनाव वाइशाह हुसेन राना से पढी। मेट्रिक पास करने के वाद मुलाजमत मे आ गये। पुख़्ता नौकरी उन्हे रेलवे मे स्टेशन क्लर्क के रूप मे मिली जहा से तरक्की करते हुए ट्रेफिक इन्सपेक्टर की पोस्ट से रिटायर हुए।

गाजी का मेट्रिक पास करना सिपाही समाज मे सग–ए–मील की हैसियत रखता है। वकोल मजरूह सुल्तानपुरी 'लोग साथ होते गए ओर कारवा वनता गया'। यहा से वीकानेर के सिपाही समाज ने शिक्षा के मामले मे जवरदस्त तरक्की की। 60 वर्ष पूर्व जहा ये लोग सवार, सिपाही, चपरासी या ज्यादा से ज्यादा वावू या पटवारी होते थे वही आज डाक्टर, इन्जिनियर, वकील, पत्रकार, लेक्चरार, प्रशासन, पुलिस, व्यापार, ठेकेदारी, खेती और राजनीति आदि हर क्षेत्र मे मोजूद है ओर वरावर फेल रहे है। गाजी साहव की एक मशहूर नज्म है 'ए–इन्कलाव, आ के तेरा इन्तजार हे'। गाजी साहव इन्तजार करते ही रह गए ओर सिपाही समाज मे शिक्षा ने एक

इन्कलाब, एक खामोश इन्कलाब, बरपा कर दिया। मे इस इन्कलाब का श्रेय सिपाही समाज की महिलाओ को अधिक देता हू क्योकि वे स्वय साक्षर न होते हुए भी बच्चो की शिक्षा के प्रति सचेत रही।

'क्या इन्कलाब आया के नक्शा बदल गया'

सिपाही समाज के शिक्षा क्षेत्र मे इस महत्त्वपूर्ण इन्कलाब के लिये किसी व्यक्ति विशेष को तो श्रेय नही दिया जा सकता मगर गाजी बीकानेरी इस इन्कलाब के प्रथम सिरे पर खडे दिखाई देते हे इसलिये भी उनको इन्कलाब का शायर कहा जा सकता हे।

गाजी 1935 मे मदान–ए–शायरी मे आ गये थे जब उन्होने बज्म–ए–अदब के मुशायरे मे, जो डूँगर कॉलेज मे हुआ था और जिसकी सदारत उस वक्त के चीफ जस्टिस मिया अहसानुलहक ने की थी लेकिन गाजी की खुशकिस्मती कहिये या बदकिस्मती कि हाई स्कूल मे उनके उस्ताद बादशाह हुसेन राना भी उस मुशायरे मे मौजूद थे जिन्होने गाजी को शायरी से अलग रहने की तलकीन की और कहा कि पहले तालीम पूरी करो। राना का रोब अपने शार्गिदो पर इतना था कि गाजी के पास उनके हुक्म को मानने के इलावा कोई चारा नही था। 1937 मे दसवी पास करने के बाद नोकरी मे लग गये। शायरी का ध्यान उनको मुल्क की तकसीम ने दिलाया जब उन्होने अपनी पहली नज्म 'हैफ ऐ हिन्दोस्ता' लिखी उसका पहला बद यू है

तेरे टुकडे क्या हुए किस्मत के टुकडे हो गये,
हिन्दु मुस्लिम दो हुए उल्फत के टुकडे हो गये
एकता सब मिट गई कुव्वत के टुकडे हो गये
सच तो ये हे परचम–ए–अजमत के टुकडे हो गये

1947 से गाजी शायरी के मेदान मे बराबर डटे हुऐ हे लेकिन नज़्म गोई उनका तुर्रा–ए–इम्तियाज हे। पिछले पचास बरसो मे रूनुमा होने वाले तमाम वाकयात ने गाजी को मुतास्सिर किया ओर वो हर मोके पर नज्म कह गये। मोरचे से खत, झूठ–सच, कुर्सी का गुर, आवाज–ए–आजादी (सुभाष चन्द्र बोस), शाती दूत (जवाहर लाल नेहरू), परमवीर चक्र अब्दुल हमीद (1965) ओर 1965 मे पाकिस्तान के भारत हमले के वक्त 'ऐ हिन्द तेरी खातिर हम जान लडा देगे' जो नज्मे लिखी वो आज तक मकबूल हें। गाजी न मुल्क के जिन मशहूर लोगो के सामने नज्मे पढी उनमे पण्डित जवाहर लाल नेहरू भी शामिल हें। एक बार ग़ाजी के एक दोस्त पन्ना

लाल बारूपाल एम पी उन्हे नेहरू जी के घर ले गये वहा कोई समारोह था। पन्नालाल जी ने नेहरू जी से कहा कि मेरे दोस्त गाजी ने आप पर एक गजल कही हे वो सुनिये। नेहरू जी ने कहा मै अपनी तारीफ सुनने का आदी नही हू। गाजी एक दम बोल पडे कि मैने भी आजतक किसी की झूठी तारीफ नही की है। नेहरू जी ने खुश हो कर पूरी नज्म सुनी। इस मुलाकात की रूदाद माहनामा शान–ए–हिन्द, दिल्ली ने फरवरी 1958 के शुमारे मे शाया की जिसमे नेहरू जी से बातचीत करते हुए गाजी साहब का फोटो सरवरक पर छपा था। एक ओर मौके पर गाजी साहब का दिल्ली मे अपनी नज्म इन्तहाए वफसी' सुनाने का मोका मिला। उन दिनो रेल विभाग ने नये आदेश जारी कर तमाम स्टेशन मास्टरो की ऑखो की जॉच करानी शुरू की। जिनकी नजरे कमजोर थी उनको रिटायर किया जाने लगा। चश्मा लगाने की भी इजाजत नही रही। इस मामले मे स्टेशन मास्टरो ने दिल्ली मे एक अधिवेशन रखा। गाजी उस वक्त स्टेशन मास्टर थे। उन्होने अपनी नज्म सुनाई। अधिवेशन मे कवर जसवत सिह एम पी राज्य सभा भी मोजूद थे उन्होने सदन मे प्रश्न उठाया। नतीजे मे नीयम बदले गये ओर स्टेशन मास्टर समय पूर्व रिटायर होने से बच गये। उर्दू मे नेताजी सुभाष चन्द्र बोस पर जगन्नाथ आजाद के बाद नज्म लिखने वाले गाजी पहले शायर हे। गाजी की नज्म की ये सिफत हे कि वो अपने मजमून को खूब निबाहते है। मेरी किताब 'शीर–ओ–शकर' के लिये जब मेने गाजी के कलाम से इन्तखाब किया तो मेरे सामने उनकी तमाम नज्मे थी। मेने दो नज्मे छांटी और उन्हे किताब मे शामिल किया। एक का शीर्षक हे "गुरू गोविन्द सिह" ओर दूसरी का "महात्मा महावीर"। एक मार्शल कोम से ताअल्लुक रखता हे तो दूसरा अहिसा से लेकिन गाजी ने अपनी नज्मो मे दोनो के साथ इन्साफ किया है। राजस्थान उर्दू अकादमी ने गाजी को उनकी नज्मो के लिये 1993 मे एवार्ड दिया ओर उनके कलाम पर एक मोनोग्राफ शाया किया। इस वर्ष अकादमी ने गाजी की नज्मो का मजमुआ शाया करने का फेसला किया हे। उम्मीद हे अब उनका कलाम जल्द ही आप लोगो तक पहुंच जायगा।

उनकी एक नज्म 'गालिब को उर्दू का खिराज–ए–अकिदत' के कुछ बन्द पेश करता हू जो उन्होने 1969 मे लिखी थी।

जश्न–ए–सद साला मुबारक शायर–ए–उर्दू नवाज
जात से तेरी जमाने भर मे हू मै सरफराज

है समझ से मेरी बाहर तेरे मद्दाहो का राज
तुझ से इतने खुश अकीदा मुझ से इतने बेनयाज
मुझ से उनका ये तगाफुल बात तक करते नही
मेरी फरयाद–ओ–फुगा पर कान तक धरते नही
फलसफे का, इल्म का बेमिस्ल गन्जीना हू मै
अहल–ए–बातिन के लिये इक दीदा–ए–बीना हू मै
इन्कलाब–ओ–गर्दिश–ए–दोरा का आईना हू मे
जग–ए–आजादी की इक तारीख–ए–परीना हू मै
सेकडा तूफान उठे हे मेरी आगाश स
जलजले जागे है मेरे नारा–ए–पुर जोश से
मुल्क को मेने सिखाया है वफाओ का चलन
सरफरोशो के सरो पे मेने बधवाए कफ़न
सिन्फ–ए–नाजुक को भी मैने कर दिया शमशीर जन
बुज़दिलो तक को बनाया मर्दुमान–ए–सफशिकन
मोहर मेरी सब्त हे पेशानि–ए–तारीख पर
हुस्न–ए–तहजीब–ओ–तमद्दुन तेरे दम से जलवागर
हुस्न सो सौ नाज करता हे तेरे अन्दाज़ पर
नाचती हे जिन्दगी तेरी गजल के साज पर
कुमरिया सरमस्त होती हे तेरी आवाज पर
वज्द हो जाता हे तारी बुलबुल–ए–शीराज पर
तेरे मुर्ग–ए–फिक्र की ये आसमा पेमाईया
हुस्न लेता हे तेरी *आवाज* पर *अगड़ाईया*
ये तेरा हुस्न–ए–तखय्युल ये तेरा हुस्न–ए–गजल
ग तरी तर्ज–ए–सुख़न, तर्ज–ए–तखातुब बेबदल
तेरे शे'रो मे हे पिनहा मानि–ए–हुस्न–ए–अजल
अहल–ए–बातिन के दिलो के जिस से खिलते हें कवल
कोन हो सकता हे 'गाजी' मर्द–ए–गालिब का हरीफ
आज तक होने न पाया जिसका कोई हम रदीफ

मोहम्मद अय्युब 'सालिक'

बीकानेर मे जिनको खानदानी शायर कहा जा सकता है उनमे जनाब मोहम्मद अय्युब सालिक का नाम भी आता है। शेख खलील अहमद खलील समदानी की तरह आप भी वो शायर हैं जिनके वालिद (वेदिल) भी शायर थे और जिनके खल्फ (माहिर) भी।

सालिक शेख मोहम्मद अब्दुल्लाह वेदिल के साहबजादे है आपकी तारीख पेदाइश 4 अप्रेल 1928 है। 1948 में दसवी जमाअत पास करने के बाद सरकारी स्कूल मे मास्टर हो गये। मुलाजमत मे रहते हुए बी.एड. भी किया जिसके बाद उनको सेकण्ड ग्रेड मिला। खानदानी रिवायत के मुताबिक उर्दू, फारसी ओर अग्रेजी जबानो मे महारत रखते हैं। घर के शे'री ओर अदबी माहोल का पूरा फायदा उठाया और जल्द ही अच्छे शे'र कहने लगे। मुशायरो मे इम्तियाज के साथ शरीक होते रहे। कलाम तो अबतक शाया नही हो सका है लेकिन दामान-ए-बागबा में आपकी कुछ गजलें और मुख़्तसर तजकरा शामिल हे। उस किताब से हस्ब जेल इक़्तबास काबिल-ए-ग़ोर है:-

'ज़बान की सलासत ओर नफासत, बयान की लताफत, ख्याल की नुदरत के अलावा दर्द-ओ-असर जो शायरी का जोहर-ए-असली हैं, सालिक का खासा-ए-तबीयत और उनकी शायरी का जुज्व-ए-आजम हे। जिन्दगी और गम-ए-जिन्दगी की तर्जुमानी ही उनकी शायरी हे। इश्क-ए-महबूब के इजहार मे भी सोज-ओ-गुदाज गालिब आ जाता हे। मुशायरों मे एक दो शे'र ऐसा जरूर कह जाते है जो बराह-ए-रास्त दिलों पर चोट करता हे ओर जबा जद-ए-खास-ओ-अवाम हो जाता हे।'

सालिक ने कम-ओ-बेश हर मुशायरे मे शिरकत की। बीकानेर मे गजल के तरही मुशायरो का रिवाज रहा और यही रिवाज नाअत सलाम ओर मनकबत मे भी। इन मुशायरो मे मकबूल होने वाले चन्द अशआर मुलाहजा हो

तेरी नजर ने जिन को सहारे नही दिये
टकरा गये वो शिशा-ओ-सागर से जाम से
शाम-ए-विसाल लाई थी रगीनिया मगर
रग-ए-सहर को देख कर नीद आगई मुझे

मे सालिक हू मगर दुनिया मुझे दीवाना कहती हे
वफा की आजमाइश इस से वढ कर ओर क्या होगी
इम्तियाज–ए–दहर पे रोना पडा सालिक मुझे
कोई मीर–ए–कारवा हे कोई गर्द–ए–कारवा
ये हाथ जो मजवूर हुए वक्त के हाथो
इन हाथो ने गिरतो को सहारा भी दिया हे
सालिक ना कभी लोट के आयेगे ये जमाना
इन्सान की अजमत का भरम खाल रहा ह

पचपन वरस की उम्र तक मुलाजमत करन क वाद 1983 म पशनयाव हुए लेकिन मुलाजमत मे तरक्की की तरफ दिलचस्पी नही दिखाई। वजह जगह जगह तवादले ओर एक वडे खानदान की जिम्मेदारिया। सालिक साहव ने इन जिम्मेदारियों को निवाहने के लिये मुलाजमत मे तरक्की से दूर रहना जरूरी समझा। अव इनकी इस राय से कौन मुतफिक हे ये तो मालूम नही लेकिन क़लील पेशन उनके लिये वाअस–ए–परेशानी जरूर हे जिसका असर शे'रगोई की कावलियत और उनकी सेहत पर साफ अया है। आप एक अर्से से साहव–ए–फिराश हे। मे उनसे मिलने जाता ही रहता हूं। वेदिल मजिल के एक अन्दरूनी कमरे मे जव उन्हे देखता हू तो मुझे गालिव याद आते हे.–

दाग–ए–फिराक–ए–सोहवत–ए–शव की जली हुई
इक शम्मां रह गई है सो वो भी उदास हे।

हा अलवत्ता पिछले कुछ वरसो मे सालिक साहव ने वेदिल मजिल का शायरी का अलम अपने वडे वेटे गुलाम मोहियूद्दीन के हाथो मे दे दिया हे जो माहिर तखल्लुस से अपना कलाम सुनाते हे। ऑल इण्डिया मुशायरे भी पढ चुके हे।

सालिक साहव के इन हालात मे अशआत–ए–कलाम का कोई तसव्वुर नही किया जा सकता। एक गज़ल वतोर नमूना–ए–कलाम पेश हे –

मेरे अश्को के सिवा कुछ भी ना था अन्जाम तक
सुवह रोशन किसने देखी हे सवाद–ए–शाम तक
फूल हसते ही रहेगे हो के मानूस–ए–वहार
गर्दिशे रुक जायेगी आकर तुम्हारे नाम तक
मुस्कराना, रूठना, मिलना, विछुडना हमनशी।
जिन्दगी की सूरते हे मोत के हगाम तक

तालिब–ए–दीदार को अब उसका पर्दा चाहिये
हुस्न जब आ ही गया ह जलवा गाह–ए–आम तक
ज़िन्दगी तय कर चुकी कितने मराहिल कुछ ना पूछ
गर्दिश–ए–सागर से लेकर गर्दिश–ए–अय्याम तक
बरहमन ने, शेख ने बदनाम मयखाना किया
दोनों ने महदूद रह कर अपने अपने जाम तक
फेर ले साकी नजर मुझरो ये देखा जायगा
हाथ ता पहुचे मरा जाम–ए–मय गुलफाम तक
उस से सालिक पूछिय क्या तल्खिए दौर–ए–हयात
वक्त ले आए जिसे दाने की ख़ातिर दाम तक

सत्य प्रकाश गुप्ता 'नादां'

1935 मे वीकानेर के उर्दू अदव से एक ऐसी शख्सियत मोजा मूसा जिला मुजफ्फरनगर से आकर जुडी जिस ने कभी अपने आप को जाहिर नही किया और न आज तक कोई उन्हे जान सका है। ये है जनाव सत्य प्रकाश गुप्ता वल्द रामस्वरूप गुप्ता। 10 अक्टूवर 1920 को मोजा मूसा मे पेदा हुए। एफ ए और उससे आगे एल एल वी तक की तालीम वीकानेर मे पूरी की। डूगर कालेज मे दाखले के वक्त एक तो वज्म-ए-अदव का इफ्तताह और दूसरे वाग-ए-फिरदोस (दीवान-ए-वेदिल) का शाया होना आप को, खुद आपके वयान के मुताविक, उर्दू से जुडे रहने की वजह वने। आप वेक मे ऑफिसर के ओहदे पर मुकर्रर हुए और उसी ओहदे से 1980 मे रिटायर हुए। *आप वीकानेर मे आवाद हुए यहीं शादी हुई और यही वच्चो* की तालीम हुई। एक वेटा है जो इस वक्त फौज मे व्रिगेडियर है। एक वेटी है जो जयपुर मे डॉक्टर है। आप की उम्र इसवक्त करीव 81 वरस है। अहलिया का इन्तकाल होने के वाद पिछले कुछ वर्षो से जयपुर मे अपनी वेटी के पास रहते है। वीकानेर और उसके उर्दू माहोल को अव तक याद रखे हुए है और जव भी इनका खत आता है तो उर्दू के नामवर शोरा आजाद, राना, वेदिल, रासिख, हजी वगेरह का जिक्र जरूर होता है। कामेश्वर दयाल हजी के कलाम को हिन्दी मे 'दिल-ए-हजी' के उनवान से शाया करना आप का ही काम था। कलाम-ए-रासिख की अशआत के सिलसिले मे वेहद मुतफक्किर रहे।

सिर्फ शे'र कहते हैं। कभी कोई मुकम्मल गजल या नज्म नही कही। कुछ कतआत जरूर कहे। चन्द अशआर तवर्रुकन पेश है।

सितारो तुम से पोशीदा नही तारीख इन्सा की
वताओ तुम जरा कितने सही इन्सान गुजरे है
किताव-ए-जिन्दगी नादा जिसे पढना नही आया
उसे जीना नही आया उसे मरना नही आया
काट दी जेसी भी नादा कट सकी
जिन्दगी मे मरहले कुछ कम न थे

बीकानेर के मुशायरे

गुजिश्ता सदी में वीकानेर रियासत के ताल्लुकात पजाव की देसी रियासतो से वहुत खुशगवार थे। पटियाला, वहावलपुर नाभा, गुरदासपुर और लाहोर के लोग वीकानेर मे आते जाते रहे। वहावलपुर मे आज भी "वीकानेरी गेट" उस जमाने की यादगार है।

पजाव सूफी सतो ओर वली अल्लाआ का घर रहा। उनमे से कुछ लोग यहा आकर आवाद भी हुए। य अपने साथ पजाव की तहजीव ओर जवान लाए। इन हज़रात को उर्दू पर कुदरत हासिल थी। 1943–44 मे चोथी क्लास मे मेरे साथ पढने वाले किशनचन्द पजावी का ये दावा मै अभी तक नही भूला हू कि "अगर वाग–ए–दरा (इकवाल का कलाम) किसी वजह से नापेद हो जाय तो मे उसे दुवारा जिन्दा कर सकता हू।"

सूफी सतो ने मुशायरो को इजहार–ए–ख्याल का एक जरिया वनाया। चुनाचे पहली निस्फ़ सदी मे नाअत, सलाम ओर मनकवत के मुशायरो को वाला दस्ती हासिल रही। 1917 मे नाअत का वो मुशायरा हुआ जिसका एक मिसरा अकाइद के एतवार से वाअसे इख्तिलाफ वन गया। फिर उसपर कई कितावचे शाया हुए। ऐसा ही एक कितावचा जो लाहोर से शाया हुआ था वो मोजूद है। इस मुशायरे का मिसरा–ए–तरहा था "हमारे सरवरे आलम के रुतवे को कोई क्या जाने"।

इसके वाद एक ओर मुशायरे की सनद मिलती है जो 8 अप्रेल 1923 को हुआ था। मोका था उस्ताद वेखुद की वीकानेर तशरीफ आवरी। इस मुशायरे का जिक्र रासिख वीकानेरी ने अपने दीवान ओराक–ए–परीशा (1936) मे उस नज्म के साथ किया है जो उन्हाने खुद सुनाई थी। इसका जिक्र हजरत खलील सम्दानी के दीवान "गुलजार–ए–खलील" (1968) मे भी मिलता है। खलील ने भी उस मुशायरे मे अपनी गजल सुनाई थी। आजाद, वेदिल, निसार, सूफी, असर ओर फेज इस मुशायरे के दीगर शायर थे।

1924 मे एक ओर मुशायरा मुनअकिद हुआ जिसकी रूदाद "उर्स–ए–महताव" के नाम से शाया हुई। मोका था हजरत महताव शाह (र) का तीसरा यॉम–ए–वफात। इस रूदाद के मुताविक ये मनकवत का तरही मुशायरा था जिसका मिसरा था, "आल–ए–अहमद की सिफत ओर

सना करते हे"। इसमें बेदिल, रासिख़, सूफी, शेदा, फेज, कतील, मजहर, नसीर, वली, रफी और रामप्रसाद तिश्ना ने मनाकिब पढी थी।

इसके बाद जिस मुशायरे की सनद मोजूद है वो 26 जनवरी 1935 को बज्म–ए–अदब के कयाम पर डूँगर कॉलेज के हाल मे हुआ था। उसकी सदारत उस वक्त के चीफ जस्टिस मिया अहसान–उल–हक साहब ने की थी ओर मोलवी बादशाह हुसेन राना निजामत पर थे। ये गेर तरही मुशायरा था जिसमे कुछ नज्मे भी सुनाई गई थी। इस मुशायरे का जिक्र करने के लिये मोहम्मद इब्राहीम गाजी मोजूद हे, जिन्होने खुद भी एक नज्म सुनाई थी। इसक आलावा मुशायरे का जिक्र रासिख़ क दीवान ओराक–ए–परीशा मे उस नज्म के साथ मिलता हे जो उन्होने पढी थी।

यहां सिर्फ़ उन्हीं मुशायरो का जिक्र किया गया हे जिनके तहरीरी सबूत मोजूद हें वरना मुशायरो की तादाद इससे कही ज्यादा हे। मुशायरे उन दिनो बीकानेर के उर्दू अदब पर इतने हावी थे कि हमे उस दोर मे नस्र निगारी का सबूत बहुत कम मिलता हे। यहा तक के 1942 मे बीकानेर मे आकर आबाद होने वाले लाला कामेश्वर दयाल हजी, जो असलन नस्र निगार थे और जिनके अफ़साने ओर कहानिया कई रिसालो मे शाया हो चुकी थी, शायरी के मैदान मे आगये ओर एक कामयाब शायर होकर उभरे। मुशायरो का ये सिलसिला आज भी जारी हे जिसमे नातिया मुशायरो को सबकत हासिल हे।

यही नही बीकानेर के शायर आजाद, बेदिल, राना, रासिख़ वगेराह ने देहली, लाहोर, शिमला, लोहारू, अलीपुर, जयपुर, जोधपुर, फ़तेहपुर ओर नागौर मे मुशायरे पढे। जिन मशाहीर के साथ इन्होने मुशायरे पढे उन मे इकबाल, जिगर, साकिब, फानी, सालिक, बेखुद, साईल, कैफी, तालिब, साहिर देहलवी जैसे नामवर शोरा शामिल हे।

खुर्शीद अहमद